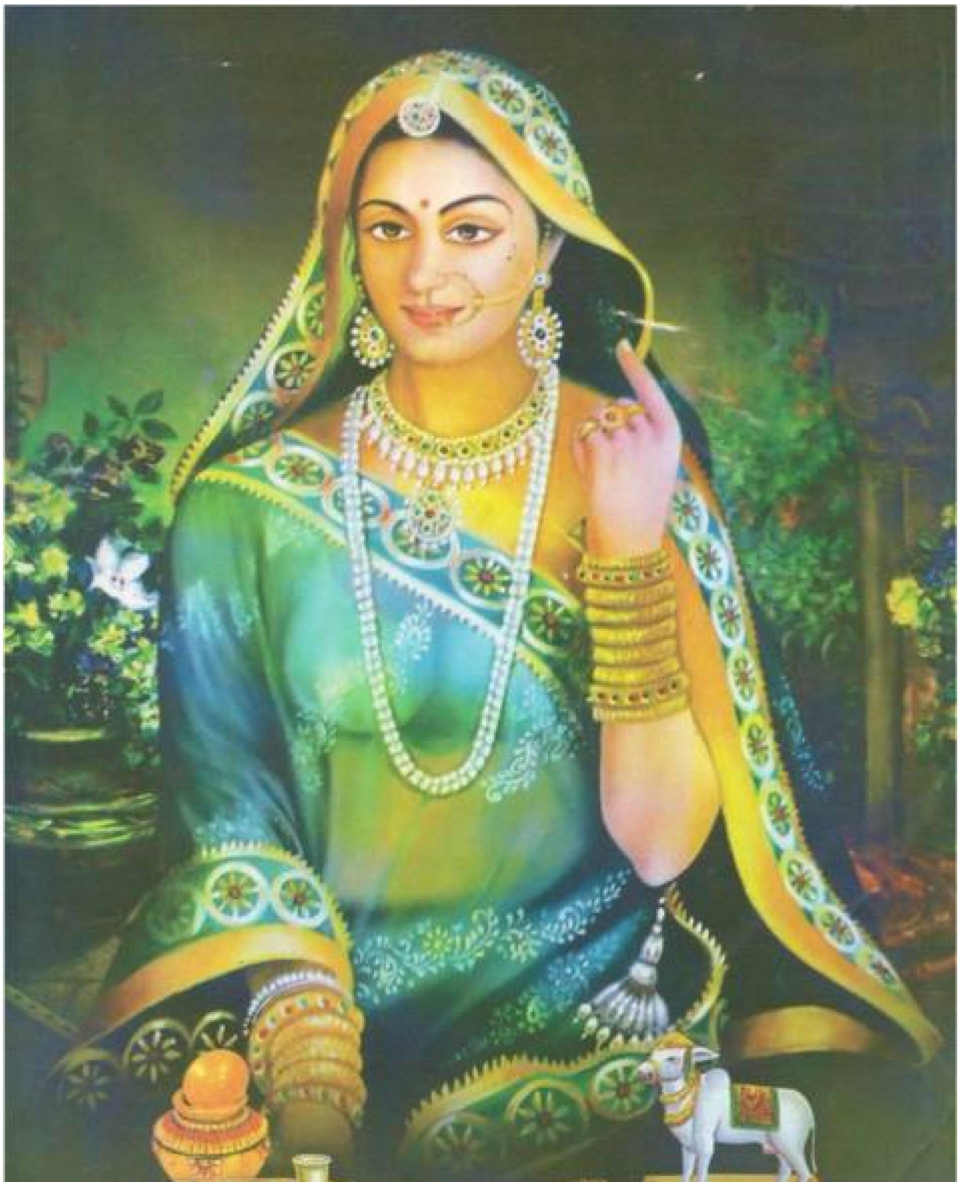

उन्मादिनी यशोदा

गोलोकवासी श्री सुदर्शन सिंह 'चक्र'

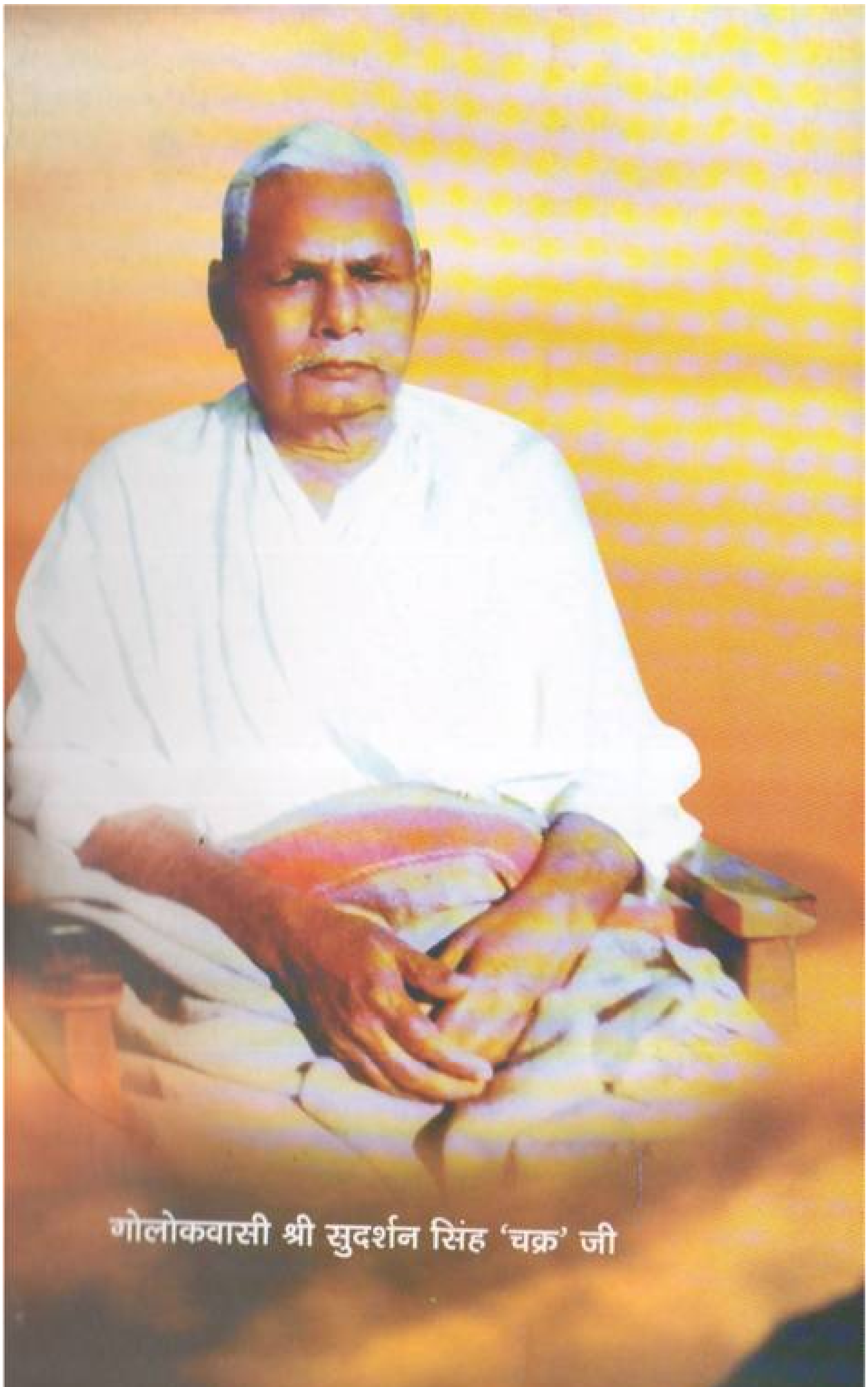

गोलोकवासी श्री सुदर्शन सिंह 'चक्र' जी

उन्मादिनी यशोदा

लेखक
गोलोकवासी श्री सुदर्शन सिंह 'चक्र'

लेखक : गोलोकवासी श्री सुदर्शन सिंह 'चक्र'

संरक्षक : हनुमद्धाम
शुकतीर्थ, जिला-मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)
पिन-257316

प्रकाशक : डॉ. बालचद्रिका पाठक
श्रीराम निकुञ्ज, प्रेमनगर
एटा (उ.प्र)

सर्वाधिकार : प्रकाशकाधीन

संस्करण : तृतीय, सं. 2074 (सन् 2017)

प्रकाशन तिथि : हनुमत जयन्ती

मूल्य : 80/-

मुद्रण : आशीष प्रिण्टर्स
173/350, कृष्णा गली
चामुण्डा कॉलोनी, जयसिंहपुरा, मथुरा
मोबाइल : 9258046104

अपनी बात

वन्दनीय वैदिक परम्परा का सुनिश्चित विधान है कि मनुष्य मात्र तीन ऋण लेकर ही उत्पन्न होता है-पितृऋण ऋषिऋण और देवऋण।

पितृऋण- हमारा शरीर माता-पिता से उत्पन्न होता है। उनके द्वारा लालित-पालित होता है। सृष्टि की जो परम्परा चल रही है, उसी ने हमें शरीर प्रदान किया। अत: उत्तम सन्तान उत्पन्न करके उस परम्परा को बनाये रखने का दायित्व हम पर है। साथ ही हम पशु-पक्षी तो नहीं हैं, यह सन्तानोत्पादन तो पशु-पक्षी भी करते हैं। मनुष्य होने के नाते माता-पिता की सेवा तथा पितृ-तर्पण भी हमारा दायित्व है।

ऋषिऋण- माता के गर्भ से कोई कुछ सीखकर उत्पन्न नहीं होता। यह गर्भजातज्ञान तो भोग-योनि के प्राणियों को प्राप्त होता है। मनुष्य तो जो कुछ सीखता है, दूसरों से ही सीखता है। यह शिक्षा सम्यक् प्राप्त करना और उसे ठीक प्रकार से समाज को लौटाना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। सनातन वैदिक धर्मी द्विजाति के लिए इसी से वेद, वेदांग का अध्ययन ऋषिऋण का परिशोध माना गया है।

देवऋण- हिन्दू धर्म, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि सबके अधिदेवता मानता है। हमारा जीवन इन सबकी सहायता के बिना दो क्षण भी नहीं चल सकता। अत: यज्ञ तथा अर्चा के द्वारा इनको सम्पुष्ट करना भी हमारा कर्तव्य हो जाता है। अभी केवल वृक्षारोपण की आवश्यकता वर्षा के लिए समझी गयी है, किन्तु पृथ्वी, नदी, समुद्र, पर्वत, सूर्य, चन्द्र, वायु, आकाश, सबका हम पर उपकार है। सबकी स्वच्छता, सबका संवर्धन हमारा दायित्व है, यह हमारा शास्त्र कहता है।

देवऋण का परिशोध-यज्ञ करके तथा ऋषिऋण का परिशोध वेदाध्ययन करके करने की परिस्थिति आज सबको प्राप्त नहीं है। मुझे सर्वथा प्राप्त नहीं रही। 'सर्वदेवभयो हरि:' वह कन्हाई अपना है। वही सेवा करता है, सुरक्षा करता है। इन अपने श्याम के लिए मैं कुछ कर सकूँ-ऐसा कुछ मेरे पास नहीं। मैंने जो लिखा है या लिखता हूँ, सब इसी का लिखवाया है। मैंने तो पढ़ा ही नहीं, पढ़ने की परिस्थिति प्राप्त नहीं हुई और हुई भी वह मेरे प्रमाद ने प्रयुक्त नहीं करने दी। अत: ऋषिऋण का परिशोध-यह लिखना हो तो वह कन्हाई ने करा लिया है।

पितृऋण में न केवल माता-पिता का ऋण आता है, पितरों की अनादि परम्परा सम्मिलित है इसमें, किन्तु यह बात शास्त्र-संत सबको मान्य है कि

इसमें सबसे बड़ा ऋण माता का ही है। माता का ही शिशु के शरीर एवं मन के निर्माण में मुख्य भाग है, किन्तु मैं इस ओर सबसे अधिक असमर्थ हूँ। माता की गोद ग्यारह वर्ष की वय में छूट गयी और एक वर्ष पीछे ही पिता भी परमधाम पधारे। इनकी सेवा तो मैं क्या करता, ठीक आकृति भी स्मरण नहीं है। सहज भाव से अप्रयत्न ही एकाकी बना रहा। एकाकी, स्थान-आवास-हीन व्यक्ति, किन्तु कन्हाई को छोटा भाई कहने वाला कैसे कहेगा कि एकाकी और पितृहीन है। दूसरी बात-मेरी जननी मैया यशोदा से एक नहीं हुई, यह भी मैं कैसे कह सकता हूँ। ललाट से शिखा-स्थान तक का सिर के मध्य का सिन्दूरांकित भाग सहसा जिसका शब्द के साथ फटा था, इस प्रकार जिसने पति के अंक में मस्तक रखकर सिद्ध योगी के समान शरीर त्याग किया था, वह मैया ब्रजेश्वरी से एक नहीं हुई होगी ?

मैं मैया ब्रजेश्वरी का यह स्मरण करके उसके श्रीचरणों में अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित कर रहा हूँ। इस उन्मादिनी यशोदा को छोड़ और कोई मातृस्मृति मेरे मन में नहीं आती-नहीं आ रही है। यह तो वसुन्धरा के समान है। उर्वीके समान अनन्त है इसकी गोद और धरा के समान ही असीम है इसकी क्षमा। वात्सल्य का घनीभाव है इसका श्रीविग्रह।

उन्मादिनी-पगली मैया मेरी। कन्हाई ने तो पूरे ब्रज को उन्मत्त बना दिया। गोप, गोपी, गोपबालक, बालिकाओं की चर्चा व्यर्थ है। ब्रज में तो गायें, वृषभ, बछड़े, बछड़ियाँ, मृग, कपि, सब पशु-पक्षी, कीट, पतंग, भृंग, नन्दनन्दन के प्रेम में इस कन्हाई के विषम-वियोग में उन्मादी हो गये। इन सबकी अधीश्वरी-श्रीब्रजेश्वरी उन्मादिनी हो गयी तो बड़ी बात क्या हुई ?

उन्मादिनी यशोदा-अपनी इस पगली मैया की बात करने चला हूँ। मैया को अप्रसन्न होना, रोष करना आता ही नहीं। आशीर्वाद या स्नेह की वर्षा उसका स्वरूप है। इनकी उससे माँग नहीं करनी पड़ती। वह प्रसन्न होगी, हँसेगी शिशु के इस प्रयत्न से।

श्याम को कैसा लगेगा, कह नहीं सकता, किन्तु मैया के स्नेह में अकेले कृष्ण का कोई ठेका है। मैया है-मेरी पगली मैया है, अतः मैं उसका स्मरण करने चला हूँ।

वृन्दावन **सुदर्शन सिंह**

श्रावण शु. अष्टमी सं. 2033, 3.8.76 ई.

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ
1.	उपक्रम	1
2.	जागरण	3
3.	प्रभात	5
4.	छाक	7
5.	सायंकाल	9
6.	रात्रि	12
7.	बाबा से	14
8.	बालकों से	16
9.	सेवकों से	18
10.	गोपियाँ	20
11.	बालिकाएँ	23
12.	वसन्त	25
13.	ग्रीष्म	27
14.	वर्षा	29
15.	आँधी	32
16.	शरद	34
17.	शिशिर	36
18.	गोष्ठ में	38
19.	यमुनातट	41
20.	गाय ब्यायी	43
21.	वर्षगाँठ	45
22.	गोवर्धन-पूजन	47

क्रम	विषय	पृष्ठ
23.	शिवरात्रि	50
24.	होलिका	52
25.	वंशी	54
26.	मयूरपिच्छ	56
27.	पीतपट	59
28.	दधि	61
29.	माखन	63
30.	रज्जू	65
31.	ऊखल	67
32.	सम्वाद	69
33.	अतिथि	72
34.	गृहपशु	74
35.	पक्षी	76
36.	काक	78
37.	स्नान	80
38.	पूजन	83
39.	उद्धव	85
40.	दाऊ आये	87
41.	शून्यता	90
42.	हास्य	92
43.	गायन	94
44.	अनुभूति	97
45.	उपसंहार	99

उपक्रम

वह दिन ब्रज का, ऐसा भी दिन होता है जो जीवन में विषम विष वज्र के समान जमकर बैठ ही जाये। ब्रज-जन-जीवन में उस दिन का विष जमकर ही बैठ गया और उसने सभी को उन्मत्त बना दिया। मैया यशोदा तो उन्मादिनी ही हो गयी।

कितनी प्रतीक्षा थी उस दिन की। तनिक खटका होता था और मैया द्वार की ओर भागती थी। दिन में अनेक बार सेवक भेजती रही थी-'देख आओ कि मथुरा से छकड़े आ रहे हैं।'

श्री ब्रजराज को मथुरा गये बहुत दिन हो गये थे। ब्रज में तो लगता था कि युगों बीत गये हैं। गोप गये थे, प्रधान सभी गोप चले गये थे ब्रजराज के साथ और बालक तो कोई ब्रज में रहा ही नहीं था। सब मथुरा चले गये थे। पता नहीं वहाँ ब्रजराज क्या करने लगे थे। इतने दिन भी कोई अपने घर से दूर रहता है। पता नहीं, बालकों की क्या दशा होगी। वे संकोची बालक कैसे रहते होंगे नगर में। वहाँ कौन मनुहार करके कन्हाई को खिलाता होगा।

मथुरा से सन्देश आते थे। कोई-न-कोई चर प्रतिदिन आता है। राम-श्याम वहाँ मथुरा में प्रतिदिन आने वालों को बसाने में लगे हैं। ब्रजराज को महाराज उग्रसेन तथा वसुदेव जी आने ही नहीं दे रहे हैं। 'अब कल आवेंगे।' लेकिन यह कल है कि कभी आज नहीं बनता।

'राम आवेगा?' मैया के मन में आशंका है, किन्तु भय के मारे वह मुख पर इसे ला नहीं पाती। माता रोहिणी अभी ब्रज में हैं, किन्तु अब यह तो स्पष्ट है कि उन्हें लेने किसी भी दिन मथुरा से रथ आ सकता है। तब वसुदेवजी राम को ब्रज कैसे भेजेंगे? 'राम नहीं आवेगा'-मैया आगे कुछ सोच नहीं पाती। दाऊ के बिना कन्हाई कैसे रहेगा? मैया से अधिक इसे कौन समझ सकता है कि कन्हाई के प्राण बड़े भाई में बसते हैं। नींद में भी वह 'दादा-दादा' ही पुकारता है। लेकिन अब दाऊ ब्रज में कैसे रह सकते हैं?

'सम्भवत: कन्हाई अपने बड़े भाई के कारण ही मथुरा रुका है।' मैया का अपना समाधान है-'श्याम रुका है, अत: ब्रजराज, गोप तथा बालक भी रुके हैं।'

कब तक काम देता यह समाधान? अन्तत: ब्रजराज को ब्रज तो लौटना

ही था। कितनी विषम विपत्ति लिये वे लौटे, वर्णन में नहीं आ सकता। राम-श्याम के बिना ब्रज लौटना? ब्रजराज के शकट के साथ नन्दद्वार तक दूसरा कोई नहीं आया उस दिन। पशु, पक्षी, कपि तक शकटों को देखकर दौड़े थे, किन्तु फिर जैसे सब उत्साह मर गया। सब जहाँ-के-तहाँ रह गये। बालक-गोप अपने गोष्ठों को, गृहों को मार्ग से ही चुपचाप चले गये।

'श्याम कहाँ है? तुम उसे कहाँ छोड़ आये?' मैया ने संज्ञाशून्य-प्राय: ब्रजराज को झकझोर दिया था। 'वह जिनका है, उनके समीप ही रहेगा।' फटे-फटे नेत्र ब्रजराज ने किसी प्रकार कहा था-'उसे भूल जाओ महर! ब्रज का कोई युवराज नहीं है।' 'क्या?' मैया जैसे चीत्कार कर उठी-'तुम उसे छोड़कर लौट कैसे आये? तुम्हारा हृदय फट नहीं गया? नहीं भी फटा तो यमुना में जल नहीं था डूब जाने को? तुम मेरे लाल को छोड़कर ब्रज कैसे आ सके? महर! मेरा लाल ला दो मुझे!'

जिस परम सती ने सम्पूर्ण जीवन पति के संकेत का भी प्राणपण से पालन किया था, पति की उपेक्षा जिससे स्वप्न में भी सम्भव नहीं थी, उसके मुख से ऐसे कठोर शब्द निकल पाते, यदि वह उन्मादिनी न हो गयी होती?

'महर! महर! मेरी एक बात सुन लो।' सहसा ब्रजराज में चेतना आ गयी। चौंककर पत्नी को मूर्च्छित होकर गिरने से सँभाला उन्होंने।

'क्या?' मेरा कन्हाई आ रहा है? मैया ने नेत्र खोले। 'वह यहाँ आवेगा ही।' ब्रजराज ने कातर स्वर में कहा-'मथुरा में सुनेगा कि मेरे वियोग में मेरे बाबा और मैया का हृदय फट गया, वे मर गये तो सिर धुन-धुनकर रोवेगा।'

'नहीं! नहीं! महर नहीं।' मैया ने हाथ धर दिया बाबा के मुख पर-'मत कहो! यह सब मत कहो। उसके कमल लोचनों में अश्रु आवे, यह असह्य है मुझे।'

'यहीं असह्य होने से नन्द नहीं मर सका और यहाँ लौट आया है। बाबा ने कहा-'तुम्हें भी जीवित रहना है इसीलिए। वह सुखी रहे, प्रसन्न रहे। हम दु:खी हैं, रोते हैं, यह सुनकर भी दु:खी न हो, यह करना है हमें महर।'

'अच्छा महर!' मैया ने कह तो दिया, किन्तु वह उन्मादिनी हो चुकी थी। उसका वह स्नेहोन्माद न होता, सचमुच यह अपने श्याम से वियुक्त जीवित रह पाती?

जागरण

ब्रह्ममुहुर्त के प्रारम्भ में ही मैया उठ जाती है। पता नहीं, इसे निद्रा आती भी है या नहीं। उठते ही अपनी शय्या टटोलती है और फिर स्वयं हँसती है–'मैं भी कैसी पगली हूँ। अब नीलमणि कोई नन्हा शिशु है कि मेरे अंक में सोयेगा। वह बड़ा हो गया। अब बाबा के पास अग्रज के साथ सोता है।'

तनिक खीझती है मन–ही–मन–'महर को कोई कैसे समझावे कि बालकों को इतने सबेरे उठा देना आवश्यक नहीं है। वे उठ गये होंगे या उठने ही वाले होंगे। उन्हें तो उठते ही यमुना–किनारे भागना है। बालकों को भी उठाकर साथ ले गये बिना नहीं मानते। मैया को इस समय अधिक ऊहापोह करने का अवकाश नहीं है। उसका श्याम यमुना–स्नान करके सीधे भागता आवेगा। उसे गोदोहन की शीघ्रता रहती है। गायें हैं कि हुंकारती रहेंगी, किन्तु उसके पहुँचे बिना बछड़ों को थन से मुख ही नहीं लगाने देंगी। इस दौड़ा–दौड़ी में सद्यनवनीत निकला रहे तो उसके मुख में तनिक-सा दिया जा सकता है। क्योंकि गोदोहन के पश्चात् तो गोपबालक आ जायेंगे। सखाओं के आ जाने पर कृष्ण को स्वयं कुछ मुख में डालना सूझता ही नहीं। वह सबको खिलाने में लगेगा। वन में जाने की जल्दी पड़ेगी सबको।

मैया दीपक जलाती है और दधि–मन्थन प्रारम्भ कर देती है। अपना हाथ–मुख धोना भी इसे शीघ्रता में करना पड़ता है। सेविकाएँ है, गोपियाँ हैं, किन्तु कन्हाई को मैया के हाथ का ही मक्खन प्रिय लगता है। मैया को ही कहाँ सन्तोष है अपने श्याम के लिए स्वयं दधि–मन्थन किये बिना।

मैया दधि–मन्थन करती जाती है और मन्द मधुर स्वर में अपने चपल नवघनसुन्दर श्याम के चरित गाती जाती है।

'अभी उठा नहीं?' बार–बार घूमकर अपनी शैया की ओर देखती है। फिर स्वयं हँसती है- 'मुझे क्यों भूल जाता है कि नीलमणि अब मेरे अंक में सोने जितना नन्हा नहीं है?'

सेविकाएँ, गोपियाँ, सेवक भरे दृगों देखते हैं 'हाय अब ये ब्रजेश्वरी इतने

प्रातः किसके लिए दधि-मन्थन करती हैं?''

कोई बोलता नहीं। कोई संकेत नहीं करता। इसी भ्रम में ये कुछ क्षण प्रसन्न तो हैं। इनकी अपार वेदना विस्मृत तो है कुछ पलको। लेकिन कितनी देर यह विस्मृति टिकेगी? दधि-मन्थन समाप्त तो होना ही है। नवनीत ऊपर आता हैं उसे निकालने से पूर्व ही पुकारने लगती हैं-'दाऊ! श्यामसुन्दर! आओ तो दौड़कर। देखो, कितना उज्ज्वल, कितना मधुर नवनीत निकला है।'

कभी ही होता है कि मन्थन-भाण्ड से नवनीत निकाल कर दूसरे पात्र में रखें। प्रायः उस मन्थन-पात्र में ही पड़ा रहता है नवनीत और ये उठकर दौड़ती है द्वार की और 'लगता है सब गोदोहन में लग गये। पता नहीं महर को इतनी क्या शीघ्रता रहती है। एक बार बालकों को घर में तो आने देना चाहिए।'

'बालक कहाँ है?' गोष्ठ के द्वार पर पहुँचकर जब मैया इधर-उधर चकित-चकित देखती-पूछती है, गोपों के करों से दोहनी छूट गिरती हैं। गायें हुंकार करने लगती हैं- क्रन्दन-भरी हुंकार। बछड़े तक साहस नहीं कर पाते मैया के समीप आ पाने का।

'महर! तुम दोनों को यमुना किनारे ही छोड़ आये?' मैया श्री ब्रजराज के समीप जाकर उपालम्भ देती है- 'दाऊ साथ है तो क्या हो गया? वह भी तो बालक ही है। नीलमणि बहुत चपल है। दोनों को पानी में खेलते रहना प्रिय है। उन्हें स्नान कराके साथ लाना था।'

'महर! तुम भवन में चलो।' बाबा को कितना कष्ट होता है यह सब कहते कोई कैसे अनुमान करेगा? लेकिन वे पुरुष हैं, अपने को किसी प्रकार सम्हालते हैं। अपनी इस उन्मादिनी अर्द्धांगिनी को उन्हें ही सम्हालना है तुम्हारे दाऊ और श्याम सुखी हैं! किन्तु वे यहाँ ब्रज में तो नहीं है।'

'श्याम ब्रज में नहीं है? मैया जैसे बहुत भूली बात स्मरण करती है। कभी स्वयं सिर पकड़कर बैठ जाती है, कभी मूर्छित होकर गिरने लगती है तो बाबा सम्हाल लेते हैं।

'कन्हाई आवेगा-आवेगा ही! किन्तु आकर वह अपनी मैया को इस दशा में देखेगा तो रोयेगा महर!' एक ही मन्त्र है श्रीब्रजराज के समीप।

'अच्छा उसे रोना नहीं चाहिए।' बाबा का मन्त्र मैया के लिए अमोध है। इसे लगता है कि इसका कन्हाई आज अभी ही आने वाला है। यह अपने को सम्हालती है और भवन लौटती है। श्याम अभी आने वाला है, अत: बहुत कुछ करना है इसे। इस प्रकार मैया के दिन का आरम्भ हुआ करता है। यही आरम्भ-क्रम बन चुका है।

प्रभात

विलम्ब हो गया जीजी! मोहन पता नहीं कहाँ निकल गया? मैया को कहाँ स्मरण रहता है कि माता रोहिणी मथुरा जा चुकी हैं। कोई यह स्मरण नहीं करावेगा, क्योंकि इस स्मृति के साथ तो कृष्ण के ब्रज में न होने का दारुण भान लगा है। मैया कहती है-'दाऊ भी भाई के साथ ही लगा रहता है। आप दोनों को ढूँढ़ लाओ। दोनों भूखे होंगे। अभी कलेऊ भी नहीं किया। पता नहीं कहाँ खेलने में लगे होंगे?'

'श्यामसुन्दर अब बड़े हो गये हैं। गोचारण करने वन में जाते हैं।' कोई सेविका या सखी कह दे सकती है। यह ऐसा उपाय है, जिससे श्रीब्रजेश्वरी दिनभर असह्य व्याकुलता से बची रहेंगी। अब सायं गायों के लौटने तक प्रतीक्षा करेंगी ये।

'कहाँ बड़ा हो गया है, किन्तु हठी है। महर भी क्या करें, मानता नहीं है वन में गये बिना। बछड़े भी नहीं, बड़ी गायें चराने की हठ है उसे।' मैया बहुत विवश स्वर में कहती है-'अब बिना कलेऊ किए ही भाग गया। गोष्ठ से भवन में तो आज आया ही नहीं। मैं कितना हाथ जोड़ती, पैर पड़ती हूँ गोपियों के, कि वे बालकों को बहुत सबेरे यहाँ न आने दें। वे बेचारी भी क्या करें, कोई बालक नहीं मानता। सब उठते ही दौड़ आते हैं।'

'सबको घर के कलेऊ के स्थान पर वन के कन्द-मूल फल प्रिय लगते हैं।' गोपियों में कोई कह देगी। ब्रजेश्वरी को ही नहीं बहलाना है, अकेली

मैया ही तो उन्मादिनी नहीं हो गयी है। यहाँ तो पूरा ब्रज पागल हो गया है। किसी को स्मरण नहीं रहता कि कन्हाई उनके मध्य नहीं है। सबको लगता ही यही है कि वह मयूरमुकुटी अभी प्रात: उसके सम्मुख ही गायों के पीछे वन में गया है।

'सब बहुत छोटे हैं। भूख लगेगी तो कच्चे-पक्के फल खा लेंगे।' मैया की यह चिन्ता कभी मिटी नहीं, मिटने वाली नहीं है।

'उनके थनों को मुख लगाते ही गायें दूध बहाने लगती हैं।' इस बात को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता, किन्तु बालक दूध पीना चाहेंगे, इसका कोई आश्वासन है?

'नीलमणि तो दूध के नाम से ही मुख बना लेता है।' मैया को कोई आश्वासन नहीं मिलता-'जन्म से ही दूध से पता नहीं क्यों उसे अरुचि है। कितने बहाने बनाकर, कैसे-कैसे फुसलाकर तो मैं उसे दो घूँट पिला पाती हूँ।'

'लेकिन कामदा के थनों में मुख लगाकर वे बड़े मजे से घैया पीते हैं।' सेवक ने बार-बार देखा है इसे-'कामदा, नन्दा, श्यामा सब उन्हें दूध पिलाती हैं।'

'गौ तो देवता हैं। कामधेनु हैं। वे किसी को पयपान कराने में हिचकती नहीं हैं।' मैया की बात सच है। नन्दब्रज में तो कोई ऐसी गौ नहीं जो थनों से किसी बालक को मुख न लगाने दे अथवा मुख लगाने पर हिलना-हटना चाहे। कन्हाई दूध पीने लगे तो गायों के थनों से धारा झरने लगती है। लेकिन बात मैया की ही ठीक है-'नीलमणि तो खेलता है। गाय के थन को मुख लगाकर मुस्कराता रहेगा। दूध मुख के दोनों ओर से कपोलों पर होकर नीचे झरता रहेगा। दूध पीता कहाँ है वह।'

मैया को प्रभात में बड़ी उलझन होती है। उसे लगता है कि उसका नटखट भवन में आये बिना बाबा के समीप से ही वन में भाग गया और अब तो सायंकाल लौटेगा। किस पर खीझे वह? ब्रजराज उसे रोक नहीं पाते। बालकों को उसके समीप पहुँचे बिना चैन नहीं। गायें अँधेरा रहता है तभी से हुँकार करने लगती हैं। गोदोहन होने के पश्चात् वे अपने बछड़ों को पिलाने के लिए भी रुकना नहीं चाहतीं। कृष्ण तो गोपाल है। गायें पुकारेंगी तो वह

बैठा नहीं रह पाता। उसे अपने कलेऊ करने की सुधि रह नहीं सकती।

मैया प्रभात में बहुत व्यस्त रहती है। स्वयं स्नान करके भगवान नारायण का पूजन करना है। अपने श्यामसुन्दर के लिए कलेऊ प्रस्तुत करना है। दोपहर की छाक तो जब जायेगी, तब जायेगी, किन्तु कलेऊ किये बिना राम-श्याम चले गये हैं वन में। उन्हें कलेऊ भेजना है और दूसरे के बनाये, सजाये कलेऊ से मैया को सन्तोष होगा?

'नीलमणि को पता नहीं कैसे मेरे हाथ की गन्ध आती है।' मैया ठीक ही तो कहती है। दूसरा कोई कितनी भी सावधानी से, स्नेह से कलेऊ सजा दे, श्याम सदा देखते ही कह देता था-'यह मैया ने नहीं रखा है।' सबेरे का समय मैया को यह कलेऊ की प्रस्तुति में व्यस्त रखता है। गोपियों को भी व्यस्त रखता है। सबको यही लगता है कि बालकों के साथ कन्हाई गोचारण करने वन में गया है। गोप भी इसी अनुभूति के कारण अपने कार्यों में व्यस्त बने रहते हैं।

छाक

'बिना कलेऊ किये दोनों वन में चले गये।' मैया दिनभर इस चिन्ता में झुलसती रहेगी। यह दिन के प्रथम प्रहर में ही छाक सजाने लगी है। छौके में क्या-क्या रखना है, यह मैया के अतिरिक्त दूसरे किसी को पता भी हो तो मैया इसे मानेगी नहीं। दाऊ की चिन्ता नहीं, वह तो जो मिलेगा, भूख लगने पर भरपेट भोजन कर लेता है। भूख न लगी हो तो केवल कन्हाई ही उसके मुख में कुछ दे सकता है, किन्तु कृष्ण को तो विशेष-विशेष पदार्थों की भूख लगती है। उसे कभी कुछ रुचता है, कभी कुछ। मैया ही अनुमान कर पाती है कि आज उसके लाल को क्या रुचेगा।

'भूख लगी है।' श्याम चाहे जब मुख उदास करके कह बैठता है।

'काहे की भूख लगी है?' यह पूछने का कोई अर्थ नहीं है। कृष्ण कभी स्पष्ट नहीं कहता, सम्भवत: स्वयं भी नहीं समझता कि उसे काहे की भूख लगी है।

'रोटी खायेगा? नवनीत और रोटी?' दाऊ या भद्र पूछेंगे। श्याम की भूख समझने की यह पद्धति है। बहुत करके पूछने पर कन्हाई अपनी घुँघराली अलकों से मण्डित मस्तक अस्वीकृति में हिला देगा। तब फिर पूछना पड़ेगा-'मोदक खायेगा? बड़े मधुर मोदक हैं।'

'उहुँ, बासी हैं। उनमें से तो गन्ध आती है।' बिना देखे, बिना जाने कन्हाई कह देगा। उसे जब मोदक खाने की रुचि नहीं है, तब मोदक में कुछ-न-कुछ त्रुटि तो होनी ही चाहिए। यह उन्हें खट्टे नहीं बतलाता, यही क्या कम है?

'तू बेझर की रोटी खायेगा? पालक का शाक लाया हूँ।' कोई सखा पूछ ले सकता है। श्याम हाँ भी कर सकता है, किन्तु ना करना हुआ तो कहेगा-'बड़े वृषभ के साथ तू थोड़ी घास चर ले। उबले शाक से तुझे अच्छी लगेगी।'

'फल ले आऊँ?' आम का नाम लो या अमरूद का। मोहन को नहीं खाना होगा तो हँसेगा-'तू कपि है? फल खाकर पेट बन्दर भरते हैं। भूख लगने पर कहीं फल खाया जाता है।'

'कनूँ! मैया ने मठरी सजायी हैं छीके में।' दाऊ जानते हैं कि उनके अनुज को पदार्थ की भूख नहीं लगती। पदार्थ जिनके करों ने बनाये, सजाये हैं, उसके हृदय की प्रीति की भूख कृष्ण को लगती है।

लेकिन मैया यह सब नहीं समझती। यह तो गोपियों से हँस-हँसकर कहती है-'नीलमणि के नन्हें उदर में अनेक थैलियाँ हैं। कोई किसी पदार्थ की-कोई किसी की। जब जो खाली होती हैं, श्याम को उसके पदार्थ की भूख लगती है। दूसरा कोई पदार्थ वह मुख में नहीं डालेगा।'

'छाक ले जाओ!' मैया प्रथम प्रहर से ही छाक भेजना प्रारम्भ करती है। दिन में कितनी बार छाक भेजेगी, कुछ ठिकाना नहीं है। एक बार में ही कितनों को भेजती है-'बालक पता नहीं किधर गायें ले गये होंगे। एक ओर जाने से कैसे मिलेंगे वे। एक दिशा से दूसरी दिशा में ढूंढ़ने जाने से तो बहुत देर होगी। सब भूखे होंगे।

सब दिशाओं में अलग-अलग छाक जानी चाहिए। मैया को यह नहीं समझाया जा सकता कि वन में सहस्त्र-सहस्त्र गायों को ढूंढ़ लेना कठिन नहीं है। दूर तक बिखर कर गायें चरती हैं। गायों को देखकर उनके चराने वालों तक पहुँचना सरल है। वैसे भी चपल बालक उछलते-कूदते चिल्लाते रहते हैं। वे कोई मौनी मुनि नहीं हैं कि किसी कुञ्ज में शान्त, ध्यानस्थ बैठेंगे।

'अरी कोई छाक ले जाओ।' मैया को एक बार छाक भेजकर सन्तोष नहीं होता। यह तो एक छाक भेजकर फिर छींके भरने लगती है-'बालक वन में उछलते-कूदते, खेलते हैं। उन्हें भूख शीघ्र लगती है।'

मैया का कहना ठीक है-'श्याम छाक देखकर प्रसन्न होकर कूदता दौड़ेगा। झटपट छींके खोल लेगा। उसे भूख का पता कहाँ लगता है। वह सखाओं को, कपियों को बाँटने-खिलाने के उत्साह में तनिक कुछ अपने भी मुख में डाल लेता है। इसी प्रकार वह थोड़ा खा सकता है।'

मैया के राम-श्याम ही तो नहीं हैं। सब बालक तो मैया के अपने ही हैं। मैया कहती है-'नन्हा तोक, तेजस्वी, देवप्रस्थ बहुत छोटे हैं। इन्हें देर तक भूखे नहीं रहना चाहिए।

दिन के प्रथम प्रहर से तृतीय प्रहर के अन्त तक मैया को छाक भेजने की धुन रहती है। यह तो मानती तब है जब कोई कह देता है-'अब तो बालक लौटने के लिए गायें घेरने लग गये होंगे। अब वे आवेंगे।'

मैया का पूरा दिन छाक सजाने-भेजने में जाता है। कोई नहीं कहेगा कि वन में दाऊ-कन्हाई नहीं हैं, छाक जायेगी तो बालक हैं, कपि हैं और कोई न भी हो तो भी उसे लौटा लाकर श्रीब्रजेश्वरी को दु:खित करने की भूल तो कोई कर नहीं सकता।

सायंकाल

विषम समय होता है सायंकाल। मैया दिन ढलते ही आतुर हो उठती है-'वंशी सुनायी नहीं पड़ती। बालक अभी लौट नहीं रहे हैं?''

आज सब कहीं वन में दूर चले गये लगते हैं। ब्रजेश्वर के समीप

बार–बार मैया सन्देश भेजती है–'कहीं भटक जा सकते हैं। उनको जाकर ले आओ!' इस सबके साथ ऋतु के अनुसार शीतल या ऊष्ण जल बालकों को आने पर स्नान के लिए प्रस्तुत करना रहता है। उनके वस्त्र कई-कई बार सम्हाले जाते हैं। उनके लिए कलेऊ स्वयं बनाये बिना मैया को सन्तोष नहीं।

'गायें आ गयीं?' सेविकाओं को अनेक बार गोष्ठ में देखने जाना पड़ता है। अन्ततः गायों के आ जाने का समाचार भी मिलना ही है। मैया स्वयं अब भवन में नहीं रह सकती।

'दोनों आते ही खेल में लग गये? दिनभर वन में खेलने से इनका मन नहीं भरा?' मैया पंकारते ही जायेगी–'दाऊ! नीलमणि! अरे तुम सब कहाँ हो? बेटा भद्रसेन!'

भद्र को अब मैया के सम्मुख पड़ने में संकोच होता है। वह भी अब पहले के समान वन से सीधे नन्दगोष्ठ नहीं जा पाता। अब वह भी अपने छोटे भाई तोक के साथ गायों को लेकर अपने गोष्ठ जाता है, किन्तु उसको तो कभी नन्दगोष्ठ के अतिरिक्त दूसरा गोष्ठ अपना नहीं लगा। मैया के सामने पड़ने से बचने को भले जाये, टिक नहीं पाता अन्यत्र।

'भद्र! बेटा भद्रसेन!' मैया को प्रायः भद्र अकेला दौड़ता आता मिल जाता है। वह आता है और मैया के अंक से रोते रोते लिपट जाता है।

'क्या हुआ? तू रोता क्यों है?' मैया ने कहाँ किसी बालक को कभी पराया माना। यह भद्र तो शैशव से श्याम के साथ उनका स्तनन्धन रहा है। मैया भद्र में व्यस्त हो जाती है–'तुझे किसी ने कुछ कहा है? श्याम ने खिझाया है? दाऊ ने साथ नहीं खेलने दिया? हुआ क्या है तुझे? दोनों कहाँ है?'

मैया ढेर से प्रश्न पूछेगी। भद्र क्या कहे? कैसे कहे? वह स्वयं नहीं समझ पाता कि दाऊ और श्याम कहाँ हैं? वे साथ नहीं थे, ऐसा उसे लगता नहीं और साथ नहीं आये। यहाँ यह स्पष्ट है। भद्र को रुदन के अतिरिक्त कुछ नहीं सूझता।

'तेरी मैया ने कुछ कहा? बाबा ने तुझे डाँटा है?' मैया भद्र का मुख अञ्चल से पोंछने लगी है-'तू क्यों अतुला* के पास जाता है? चल, हाथ मुँह धो। कुछ खा।'

मैया को कन्हाई दो क्षण को भूल गया है। यह भद्र रो रहा है। इस समय इसको चुप कराना है। इसे कुछ खिलाना है। मैया भवन में जाते ही भूल जाएगी। गायों की हुँकृति सुनायी पड़ने लगी है। भद्र कदाचित ही कुछ खा सकता है। वह आँसू पोंछकर दोहनी माँगेगा।

भद्र को ही नहीं, मैया को भी लगता है कि उसके राम-श्याम गोष्ठ में आ गये होंगे। गायें पुकारें और गोपाल न आ जाय, ऐसा नहीं होता। कन्हाई कहीं भी खेल में लगा हो, गायों के पुकारने पर अवश्य दौड़ आता है। अब गोदोहन के समय तो सब बालक अपने गोष्ठों में चले जायेंगे।

'दाऊ की, कन्हाई की दोहनी भी मैं ले जाऊँगा' भद्र आग्रह करेगा। भद्र की माँ ! मैया यशोदा की छोटी देवरानी।

'तू चल, मैं दोहनियाँ भेज रही हूँ।' मैया भद्र को दोहनियाँ नहीं देना चाहती। बालक है, कहीं भी गिरा देगा, किन्तु भद्र मानने से रहा। अत: दोहनियाँ उसे देनी ही पड़ेंगी। यद्यपि प्रतिदिन यह दोहनियाँ फोड़ देता है। क्या करे, उत्साह से दौड़ा जाता है गोष्ठ में- 'दादा! कनूँ! मैं तुम दोनों की भी दोहनियाँ ले आया।'

इस प्रकार का उत्तर जब नहीं मिलता, सुकुमार हृदय बालक के हाथ से दोहनियाँ छूटकर गिरेंगी नहीं? श्रीब्रजेश्वर प्राय: दौड़कर भद्र को सम्हालते हैं। सम्हालते हैं और स्वयं उसे गोद में लेकर रुदन करने लगते हैं।

गायें हुँकार करती हैं। बछड़े-बछड़ियाँ माताओं के थनों से मुख लगाना नहीं चाहते। गायों को किसी प्रकार गोदोहन सम्पन्न करना पड़ता है।

मैया प्रतीक्षा करती है-प्रतीक्षा करती व्याकुल होती है-'अब तक गोदोहन करके उसके दाऊ कन्हाई भीतर नहीं आये? बाबा को भी व्यालू करने में विलम्ब होता है। भीतर आते उनका भी हृदय विदीर्ण होता है।

---

* अतुला भद्र की माँ! मैया यशोदा की छोटी देवरानी।

रात्रि

बिना आहार एवं निद्रा के प्राणी जीवित नहीं रह सकता, अत: मैया भी कुछ खाती है, कुछ क्षण सो लेती है, किन्तु कब सोती है, यह जानना बहुत कठिन है। कन्हाई ब्रज में था, तब भी मैया को निद्रा अल्प क्षण ही आती थी। अब वे क्षण अत्यल्प रह गये हैं।

भद्र, तोक, तेजस्वी, अंशु, देवप्रस्थ प्रभृति सखा है, बालिकाएँ हैं, इनमें से अनेकों को प्रतिदिन नन्दभवन आना है। भद्र का तो जैसे अपना भवन ही दूसरा नहीं है। इन बालक-बालिकाओं को मैया खिलाये नहीं, चैन पड़ेगा इसे ? ये बालक जब अपने करों से ग्रास उठाकर मैया के मुख में देने लगते हैं, मैया मुख बन्द कर सकती हैं ?

'आप नहीं खायेंगी तो मुझे नहीं खाना है।' बालिकाएँ बहुत हठी हैं, अनेकों का आग्रह रहता है-'मुझे तो आपका प्रसाद ही ग्रहण करना है।'

मैया को इन सबके आग्रह से मुख में कुछ डालना पड़ता है। इसे तो सब बालक अपने नीलमणि ही लगते हैं। श्याम नहीं है। उसके साथ ही भोजन, कलेऊ के अभ्यासी उसके सखा, अब ये नन्हें, सुकुमार सूखते जा रहे हैं। मैया इन्हें अंक में बैठाकर कुछ खिलाना चाहती है। इनको खिला सके, इसलिए इनके आग्रह से कुछ मुख में डालना पड़ता है इसे। श्याम नहीं है। वह मथुरा जा बसा है। यह तथ्य सायंकाल कैसे विस्मृत रह सकता है? ब्रजेश्वर व्यालू करने भवन में नहीं आते। अब रात्रि में कोई गोप उन्हें किसी प्रकार थोड़ा दूध पिला देता है।

'दाऊ और कन्हाई आये नहीं। दोनों कब तक खेलते रहेंगे ? कोई उन्हें ले आओ।' देर तक मैया की रट चलती है। अन्त में कोई न कोई बालक आ जाता है। कभी कोई बालिका आ जाती है उसका रुदन, उसका सूखा मुख मैया जाग उठती है। जागकर इसका शोक ही तो जागता है। प्रफुल्ल कल्पलता को पूरे सहसा किसी झंझावत ने समूल उखाड़ फेंका हो।

'अरे नहीं, तू रो मत!' मैया का वात्सल्य भी जागता है उसी क्षण वह

व्याकुल होकर फूट-फूटकर रोते बालक या बालिका को अंक में समेटती हैं, नीलमणि आवेगा-आवेगा ही। आज नहीं आ सका तो क्या हुआ, कल अवश्य आवेगा।'

'कल अवश्य आवेगा।' मैया को अपनी बात ही आश्वासन देती है। कल-कल- वह कदाचित कल्पान्त तक इस कल की ऐसे ही प्रतीक्षा कर सकती है। यह प्रतीक्षा-कल अवश्य आ जाने की आस्था न होती, मैया का हृदय पहले दिन ही फट गया होता, किन्तु श्याम कल आवेगा और उसे अपनी मैया ब्रज में न मिले, क्या दशा होगी उसकी? वह हिचक-हिचक कर रोवेगा। नहीं, उसके रुदनकी कल्पना असत्य है मैया को। अत: मैया उसके आगमन की प्रतीक्षा करेगी कर रही है।

'कन्हाई कल अवश्य आवेगा।' मैया स्वयं अपने शक बार-बार दुहराती है अस्फुट स्वर में। उस बालक या बालिका को अपने अंक में लेकर शैया पर थपकी देकर सुलाने का यत्न करती है।

पलकें बन्द होती हैं। विस्मृति ही तो जीवन बन गयी है मैया की। उसे भूल ही जाता है कि उसकी गोद में कोई बालक है बालिका। उसे लगता है, उसका कन्हाई ही सो रहा है उसके अंक से सटा। मैया टटोलती है, थपकी देती हैं, कभी लोरी गाने लगती है।

'यह इतना बड़ा हो गया।' बार-बार मैया चौंकती है। उसे बार-बार लगता है कि उसका नीलमणि नन्हा शिशु है। अभी कुछ ही महीने का तो है। नन्हें शिशु के समान उसे नेत्र बन्द किये-ही-किये सम्हालती रहती है। चद्दर से ढकती रहती है। थपकी देती रहती है। इसी में कभी समीप सोते बालक के शरीर का स्पर्श चौकाता है। लगता है कि श्याम अब शिशु नहीं है, कुछ बड़ा हो गया है।

मैया इसी उलझन में कुछ क्षण तन्द्रा ले लेती है। इस तन्द्रा को ही इसकी निद्रा मानना पड़ेगा। यह तन्द्रा इसे अधिक सावधान रखती है शान्त-शिथिल पड़े रहने को। भय लगता है, अधिक हिलने डोलने से कन्हाई जाग जायेगा। केवल हल्के करों से थपकियाँ देने लगती है। जो अंक से लगा सो रहा है,

वह तनिक भी सुगबुगाये तो थपकियों का वेग बढ़ जाता है और मैया लोरी गाने लगती है।

रात्रि में अनेक बार मैया चौकती है। अनेक बार पड़े-पड़े ही मन ही मन हँसती है मैं भी कितनी पगली हूँ, नीलमणि सदा शिशु ही तो नहीं रहेगा अब बाबा के समीप सोने योग्य हो गया है, किन्तु मैया के स्नेह के कारण महर के समीप शयन करने नहीं जा पाता।'

तन्द्रा इस भाव को अधिक आह्लाद भरा बना देती है। निन्द्रा के ये क्षण ही मैया के सबसे आनन्द भरे क्षण हो गये हैं अब।

बाबा से

'ब्रज से गए बालकों को बहुत दिन हो गये महर।' मैया बार-बार आग्रह करती है, आप मथुरा क्यों नहीं जाते हैं? वसुदेव जी आपके अनुरोध से दाऊ को भी एक बार अवश्य भेज देंगे। बड़े भाई के साथ भी नीलमणि चला आवेगा।'

बाबा का समझाना काम तब आता जब मैया सावधान रहती। इसे तो स्वयं अपनी कही बात ही स्मरण नहीं रहती। इसका आग्रह, इसकी बात सुनंकर ब्रजेश्वर व्याकुल हो जाते हैं, किन्तु करें क्या? यह कोई अपने हाथ की बात है। वसुदेव जी मना नहीं करेंगे, किन्तु उनसे कैसे कहा जाये? कितना कष्ट पाया उन्होंने। कारागार में पड़े रहे, उनके 6 पुत्र मार दिये गये। वर्षों के पश्चात उन्हें और दु:खिया देवकी के पुत्रों का मुख देखने को मिला है। उनसे कैसे कह सकता है कोई कि अपने पुत्र हमारे साथ भेज दें?

कितना कष्ट भोगा कंस के शासन में मथुरा के लोगों ने, कुछ ठिकाना है। पता नहीं कहाँ-कहाँ यादव अपने स्त्री बच्चों के साथ भटकते रहे। अब उनके दिन लौटे हैं। अब कृष्ण चन्द्र उन्हें सादर आमन्त्रित करके बसाने में लगा है, वही तो सबका आधार है। और महाराज उग्रसेन को कितना संकोच होगा, यदि वहाँ से कोई श्याम को बुलाने चला जाये?

राम-श्याम गुरुग्रह अध्ययन करने चले गये थे। वहाँ से लौटे तो मगधराज

जरासन्ध ने मथुरा पर आक्रमण कर दिया। तेईस अक्षौहिणी सेना–ब्रज के आसपास के भी कानन उसके सैनिकों, गजों, रथों से बढ़ गये। भले वह सेना मारी गयी, किन्तु मथुरा जाने योग्य रह गयी ?

असंख्य मानव, गज, अश्वों के शव जिस नगर के चतुर्दिक पड़े हों जिसके चारों ओर रक्त का दलदल महीनों बना रहे और उस दलदल में टूटे रथ, अस्त्र शस्त्रों का अम्बार पड़ा हो उस नगर के प्रमुख व्यवस्थापक को कहीं बाहर जाने का अवकाश होगा ? बाबा यही सब बार–बार समझाते हैं।

जरासन्ध प्रतिवर्ष मथुरा पर चढ़ायी करता है। एक बार के आक्रमण के पश्चात् स्वच्छता हो नहीं पाती, तब तक उसके फिर आने के उद्योग का समाचार आ जाता है। राम–कृष्ण को अवकाश ही नहीं है, किन्तु मैया यह सब कहाँ समझती है। यह तो बार–बार श्रीब्रजेश्वर के पैर पकड़ती हैं मुझे मथुरा भेज दो।'

समाचार आया 'मथुरा से सब द्वारिका चले गये।'

'मेरा नीलमणि अब नहीं आवेगा ?' मैया ने पूछा श्रीब्रजराज का हृदय काँप उठा फटे–फटे नेत्र हीन मुख लेकिन उनका हृदय यदि स्वीकार करले कि वे दोनों नहीं आवेंगे' हृदय फटे बिना रह सकेगा ?'

'वे आवेंगे–आवेंगे ही महर। बाबा कहते हैं–'नीलमणि अवश्य आवेगा। उसके रथ के लिए द्वारिका दूर नहीं है। केवल यह बाधा अवश्य पड़ गयी कि हमें अब उसका प्रतिदिन समाचार नहीं मिलेगा। उसके आने की सूचना भी पहिले से नहीं मिलेगी। वह अचानक आ जायेगा।

'कितनी दूर है द्वारिका ?' मैया रोकर गिड़गिड़ाती है–'महर ! कितनी भी दूर हो, मैं पहुँच जाऊँगी। मेरे प्राण अपने नीलमणि को देखे बिना नहीं निकलेंगे। मुझे भेज दो उसके पास।'

'महर ! उसे बहुत संकोच होगा।' बाबा की बात मैया की समझ में ही नहीं आती।

'मैं उसके राजभवन में रहने कहाँ जा रही हूँ।' मैया कहती है–'मैं अहीरनी हूँ। कहीं उसके कोने में झाड़–झंखाड़ में रहकर दिन काट लूँगी।

वह निकलेगा तो दूर से उसे देख लिया करूँगी उसे।'

'मेरी ओर महर! मुझ अभागिनी के पयोधर उसका नाम लेने पर अब भी दूध टपकने लगते हैं।' मैया क्रन्दन करती है-'मेरी गोद का धन जहाँ है, मुझे वहाँ भेज दो!'

'महर! कितना अयश होगा उसका! श्री ब्रजराज सिरपर हाथ पटक लेते हैं-लोगों को जब पता लगेगा-ही कभी न कभी! क्या कहेंगे लोग उसे कि वह अपनी मैया को इस प्रकार कंगालिनी बनाये रखता है?'

'उसका अयश होगा?' मैया की श्वास जैसे अटक जाती है। यह एक-एक अक्षर अटक अटक कर बोलती है-'उसका अयश नहीं होना चाहिए। उसको संकोच नहीं होना चाहिए।'

'इसीलिए हम दोनों यहीं रहेंगे। जीवित रहेंगे। ऐसे रहेंगे कि वह आवे तो हमको देखकर उसके कमल लोचनों में अश्रु न आवे।' बाबा समझाते हैं। मैया समझती है, किन्तु कितनी देर को? इसकी समझ सुधि-बुधि लेकर वह नवघनसुन्दर द्वारिका जा बैठा है। यह फिर हठ करेगी वहाँ जाने की।

बालकों से

वियोग की अनुभूति कब किसे होगी, कुछ नियम तो नहीं है। ब्रज में वियोग है या वियोग की अनुभूति, कहना कठिन है, अत: संयोग को अनुभूति कहना कठिन है, किन्तु बीच-बीच में स्मरण आता है-कृष्ण तो मथुरा चला गया है दाऊ दादा के साथ। जब यह स्मृति आती है, जिसे आती है-जैसे क्षण में शरीर का रस-रक्त सूख जाता है।

बालक कहाँ आश्रय लें? जब दिशाएँ अंधकार से अच्छन्न लगें, जब विपत्ति का महादैत्य मुख फाड़े निगलने को दौड़ता आता दीखे, बालक माता की गोद को छोड़कर कहाँ मुख छिपाने जाये?

सदा हँसते रहने वाला, सबको हँसाने वाला, मधुमंगल, श्रीदाम, सुबल, वरुथप तक रोते दौड़े आते हैं, भद्र, अर्जुन, ऋषभ, विशाल तो मैया के अपने बालक हैं, जेठानी या देवरानी के बालकों को मैया ने पराया कभी

जाना ही नहीं। क्या हुआ कि कन्हाई से ये कुछ बड़े हैं। दाऊ से तो सब छोटे ही हैं। ये आते हैं और कटे वृक्ष की भाँति मैया की गोद में गिर पड़ते हैं।

इनके छोटे भाई देवप्रस्थ, अंशु, तेजस्वी, तोक-ब्रज के दूसरे सहस्त्रशः बालक और सबकी आश्रय, सबकी अवलम्ब तो मैया की वात्सल्यमयी गोद ही है। कभी कोई भागा दौड़ा आवेगा और मैया की गोद में गिर पड़ेगा। मुख छिपाकर मूर्छित नहीं हो गया तो हिचकी ले लेकर रोयेगा।

'कनूँ!' कठिनाई से शब्द निकलेगा मुख से, किन्तु मैया को कुछ जानना-पूछना नहीं है। ये बालक तो इसके जीवन है। ये आते हैं, आते ही रहते हैं प्रायः। इनके ही कारण तो मैया में आश्वासन जागता है। मैया का अनन्त वात्सल्य उमड़ता है और उसे जीवित रखता है।

'महर कहते हैं कि वह आवेगा-अवश्य आवेगा।' मैया पीतमुख, कृशकाय बालक को बाहुओं में समेटकर व्याकुल हो उठती है-'बेटा! मैं तो वन में नहीं जा सकती, तू वन सीमा तक जाकर देख तो सही, मुझे लगता है कि तेरा सखा आ रहा है। तू तो जानता है कि महर मिथ्या नहीं बोलते।'

'मैया!' बालक मुख उठाकर मैया के मुख की ओर अश्रु भरे नेत्रों से देख ले, यही बहुत है।

'मेरे लाल!' मैया ये अश्रु भरे दृग नहीं देख सकती। आँचल से मुख पोंछती कहती है-'तू कुछ खाले। इतना दुबला रहेगा, उदास रहेगा, रोयेगा तो नीलमणि तुझे देखकर दु:खी हो जायेगा।'

'वह मुझसे रूठकर गया है।' बालकों को यही दु:ख है-'तू उससे कह देना, मैं अब उसे कभी नहीं खिझाऊँगा, उससे कभी लड़ूंगा नहीं।'

'मैं कह दूँगी।' मैया को भी लगता है कि उसका लाल मित्र से लड़के वन में कहीं भाग गया है-'तू कुछ खाकर जा। मैं उसे समझा दूँगी। मित्रों से रूठा नहीं जाता। वह तुझसे रूठ नहीं सकता।'

मैया जानती है कि मधुमंगल को मोदक रुचता है। भद्र दही से प्रसन्न होता है। तोकको नवनीत चाहिए। बालकों की रुचि मैया सबकी जानती है, किन्तु कृष्ण के बिना बालक मुख में तब कुछ डालेंगे, जब स्वयं मैया भी

कुछ स्वीकार करे। बालकों को भूखे नहीं देखा जा सकता।

'तू इतना दुबला हो गया।' मैया एक-एक अंग स्नेह से देखती है, सहलाती है-'नीलमणि चञ्चल है। उसके साथ दौड़ेगा कैसे? वह तुझे चिढ़ावेगा।

'तू उसे बुला दे।' वियोग में मान जगाने पर भी जागा नहीं करता। बालक कह देते हैं-'चिढ़ा लेगा तो क्या हो जायेगा, किन्तु तू उसे बुला।'

'लाल! वन में से तो तू ही उसे ढूँढ़कर ला सकता है।' मैया बालक का शरीर, उसके पैरों के तलवे देखती-सहलाती है-'हाय! तू काँटों में भटकता फिरा है? तेरे शरीर में खरोंचे हैं। तेरे पैरों में काँटे लगे हैं।

'कहाँ?' बालकों को कहाँ अब शरीर की सुधि रही है। वन में वियोग की स्मृति आने पर अपने कन्हाई को ढूँढ़ने में कुश-कंटक दीखते हैं इन्हें।

'नीलमणि भी ऐसे ही भटकता होगा?' मैया का हृदय मानो फट जाने वाला हो। 'उसे तो अक्रूर रथ में बिठाकर ले गये थे।' बालक यह कहकर अवश्य मूर्छित हो जायेगा और मैया हड़बड़ा कर कहेगी-'वह आज आने वाला है।'

सेवकों से

विपिन बिहारी उस चपल को तुम लोग ढूँढ़ते क्यों नहीं हो? वह कहाँ गया है? गोष्ठ में है, यमुना तट पर है या वन में चला गया है?' मैया सेवकों पर खीझती है-'तुम लोग यहाँ बैठे क्या कर रहे हो? कितना नन्हा सुकुमार है नीलमणि। कब से वह गया है। उसे ढूँढ़ लाओ।'

कोई कहाँ ढूँढ़े उसे? जन्म जन्म के योग-यज्ञ, ध्यान-तप-धर्म से परिशुद्ध अन्तः करण मुनिगण भी जिसका पता नहीं पाते, उसे ढूँढ़कर कोई पा सकता है? उसका पता वह दे, तब मिले। उसकी प्राप्ति तो उसी की अनुकम्पा पर निर्भर है, किन्तु ब्रज में कोई बात कहेगा? कन्हाई क्या इनके लिए कभी आगम्य रहा है लेकिन वह मथुरा जा बैठा है और यहाँ से कोई वहाँ जाये कदाचित संकोच होगा उसे। सेवक यह बात भी मैया से कहने

की स्थिति में नहीं है।

'उसे पानी बहुत प्रिय है। देखो तो सही यमुना किनारे तो नहीं चला गया।' मैया स्वयं चल पड़ती है-'वह धारा में उतर पड़ेगा। उसके सब साथी शिशु ही तो हैं।'

'यमुना तट पर कोई नहीं है।' सेवक नम्रता पूर्वक निवेदन करते हैं-'सूना पड़ा है सम्पूर्ण पुलिन। हम अभी आये हैं उधर से।'

कंठ भर जाता है। नेत्रों में उमड़ते अश्रु मुख छिपाकर पोंछने पड़ते हैं। हाय! जो पुलिन उन पादपकंजों से पुनीत होता रहता था, जहाँ उनके साथ बालकों का उल्लास गूंजता था, जहाँ गोपियाँ अकारण जल भरने के बहाने जमी रहती थीं, जहाँ से कपि, मृग, पक्षी हटने का नाम नहीं लेते थे, वह पुलिन सूना पड़ा है। वहाँ कोई अकेला कौआ तक नहीं दीखता। उस पुलिन पर जाते अब प्राण काँपते हैं। नन्दब्रज का वह निर्मल, उज्वल, कोमल पुलिन-किन्तु-'आपके कुमार अब बड़े हो गये हैं। वे गायें चराने जाते हैं।' सेवक यही कह सकते हैं। श्रीब्रजेश्वरी को 'कृष्ण' नहीं है। यह कहने का साहस कोई नहीं कर पाता।

'उसे घर में बैठना अच्छा ही नहीं लगता वन-वन भटकता फिरेगा। तुममें-से कुछ चले जाओ।' मैया कैसे मानले कि सुकुमार बालक गायों के पीछे भटकते थकेंगे नहीं, 'तुम लोग गायें घेरना। बालक कुछ तो विश्राम कर सकेंगे। वे खेलने में लगे तो खेलने देना।'

'आप जानती हैं कि आपके कुमार को किसी बड़े गोप का भी साथ जाना स्वीकार नहीं है। सेवक ठीक कहते हैं। श्याम जब पहिले दिन बछड़े चराने चला था, तब ब्रजपति बहुत चाहते थे कि वे स्वयं या दूसरे गोप साथ रहें बालकों के किन्तु कन्हाई ने किसी को साथ आने नहीं दिया। गोचारण के समय गोप गये भी पीछे से तो वह खीझने लगा था। सेवकों की बात मैया समझती है, किन्तु इसका मन मानता नहीं है।

'दूर से देख तो आओ कि बालक किधर गये हैं।' वे क्या कर रहे हैं।' मैया को दिन में अनेक बार यह धुन चढ़ेगी। सेवकों को चुपचाप इसे

मानकर वन में जाना है। कम से कम गायों को, दूसरे बालकों को दूर से देखकर आ ही सकते हैं वे।

'कन्हाई, कृष्णचन्द्र, ब्रजयुवराज' सेवकों की स्वयं भी मनस्थिति कहाँ ठीक है। ब्रजपति के सदन में सेवक कभी सेवक की भांति रहे ही कब। श्यामसुन्दर किसी को बाबा कहता था, किसी को ताऊ और किसी को चाचा। ये तो ब्रजेश्वर के स्वजन हैं। कृष्ण के वियोग में व्याकुल ये स्वजन-किसी गोप से कम व्यथा है इनकी। लेकिन इन्हें भी यही लगता है बारबार कि ब्रज का वह चपल नवघन सुन्दर युवराज सचमुच आज प्रात: ही गोचारण करने वन में गया है।

मैया इनमें अनेकों का सम्मान करती है जो ब्रजपति से बड़े हैं, उन्हें स्वसुर या ज्येष्ठ के समान मानती है। ब्रजपति से जो छोटे हैं, उन्हें भी ब्रजेश्वरी का स्नेह वैसे मिलता है, जैसे देवरों को, किन्तु कन्हाई के मथुरा जाने पर तो ब्रज में पशु-पक्षियों तक को वियोगोन्माद हो गया है। मैया कभी ब्रजेश्वरी से ही उलझ पड़ती है-तो सेवकों पर कभी खीझे, क्या आश्चर्य।

'कोई नहीं देखता मुझ दु:खियारी की ओर। मेरा अंक धन खो गया मुझसे। स्पर्श मणि पाकर मैं कंगालिनी हो गयी और कोई मुझ पर दया नहीं करता।' वियोग का स्मरण होने पर मैया क्या बोल जायेगी, कुछ ठिकाना नहीं-'मैंने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा। क्यों मुझसे ही सब शत्रुता करने लगे हैं। नीलमणि को लेने कोई क्यों नहीं जाता है?' सेवकों के लिए एकान्त में जाकर रुदन करने के अतिरिक्त और क्या उपाय रह जाता है ऐसे समय।

गोपियाँ

'वह हम लोगों के उलाहनों से ऊब गया होगा।' गोपियों की व्यथा का अन्त नहीं है। 'हमसे उसका भुवनसुन्दर मुख देखे बिना रहा नहीं जाता था। हम कोई न कोई बहाना बनाकर ब्रजेश्वरी के समीप पहुँच जाती थीं। कभी कुछ और कभी कुछ, नित्य नये लाञ्छन-अब यदि उसे हमारे उलाहनों

का स्मरण होगा, कितनी वितृष्णा जागेगी उसके मन में ?'

'हमने उसे तंग भी तो कम नहीं किया। तनिक से माखन के लिए नचाया। गोबर उठवाया और क्या-क्या नहीं करवाया।' गोपियों को अब कुछ स्मरण आता है 'कितना भोला, कितना स्नेहमय था वह, किन्तु मथुरा जाकर जब उसे हम सबका गँवारपना स्मरण आता होगा।'

'हम अब कहें भी किससे कि हमने सब प्रेम-विवश होकर, उसके स्नेह में आकर किया ?' कोई उपाय नहीं दीखता है।

वह तो तुम सबके आशीर्वाद से ही आया। मैया पहिले भी कहती थी-'तेरे ऐसे पुण्य कहाँ। तुम सबके पुण्यों के प्रताप से ही वह इतने संकटों में सुरक्षित रहा।'

'ब्रजेश्वरी! हमें क्षमा करना।' मैया से इतना कहना भी कठिन है। वे अञ्चल हाथ में लेकर पैरों पर सिर हीरख देती हैं-'उसे आशीर्वाद दो। वह जहाँ रहे, सुखी रहे, स्वस्थ रहे, प्रसन्न रहे। इस दुखिया मैया की बात सोचकर दु:खी न हो। उसे कभी उष्णवायु न लगे।'

ब्रज में किसी से यह आशीर्वाद माँगने की आवश्यकता है? यहाँ तो बोल सकते तो पशु-पक्षी, वृक्ष लता सब बोलते-'वे श्यामसुन्दर हमारे जन्म-जन्म के सम्पूर्ण पुण्य लेकर सुखी रहें। उनको प्रसन्न रहना चाहिए।'

'कितना ऊधम करता था वह।' मैया अब उलटी बात कहती है गोपियों से-'तुम सबने उसे सदा क्षमा किया, सदा वात्सल्य दिया। अब भी उसी उदार वात्सल्य से उसे आशीर्वाद दो ?

'वे घनसुन्दर सुखी रहें।' सभी गोपियाँ इसमें एकमत हैं-'उनको यहाँ आने में तनिक भी संकोच होता हो, उनके किसी कार्य में थोड़ी भी बाधा पड़ती हो तो उन्हें यहाँ नहीं आना चाहिए। हम उनके वियोग के दिन ऐसे ही व्यतीत करती रहेंगी।'

'वह आवेगा ही।' मैया बार-बार ब्रजपति की बात दुहराकर कहती है-'आवेगा तो तुम्हारे यहाँ गये बिना उससे रहा जायेगा ? वह देखेगा कि तुम दुर्बल हो, तुम्हारा ग्रह असज्ज हैं तो उसका कमल मुख उदास हो

जायेगा। उसके बड़े-बड़े लोचन अश्रु टपकावेंगे।'

'यह नहीं होना चाहिए-यह नहीं सहा जा सकता।' इसीलिए तो ब्रज में कहीं प्रकट वियोग का चिन्ह देखने को नहीं मिलता। सब गृह सुसज्ज रहते हैं। सब भोजन करते हैं, शयन करते हैं, अपने को सजाये रहते हैं। उसके आने की आशा पूरे ब्रज को जीवित रखे है। फिर ये तो गोपियाँ हैं श्रीकृष्णचन्द्र के वात्सल्य की साकार प्रतिमाएँ। इनमें कोई ऐसी नहीं, जिसे कन्हाई 'माँ' न कहता रहा हो। नन्दनन्दन को चाची, ताई कहना मानो आता ही न हो। वह तो सेविकाओं को भी 'माँ' ही कहता था। ब्रज में मैया के अतिरिक्त जितनी बड़ी गोपियाँ थीं, सबको वह माँ कहता था। इनका जीवन उसी की आशा में अटका है, यह कुछ कहने की बात है।

गोपियाँ आती हैं, प्राय: आती ही रहती हैं, नन्दभवन। मैया के समीप आकर ही अब प्राणों को तनिक शान्ति मिलती है। ये आती है तो मैया की भी बाह्य चेतना लुप्त नहीं होती। मैया भी सावधान रहती है।

'ब्रजेश्वरी! अब तो तुम्हारा नीलमणि आवेगा तभी हम उपहार लेंगी।' मैया किसी का सत्कार करने में किञ्चित भी प्रमाद नहीं करती। वह तो अब देवता, ब्राह्मण, अतिथि का ही नहीं, अपनी जेठानी, देवरानी तथा सामान्य गोपियों का भी बहुत अधिक सत्कार करने लगी है। सबको उपहार देना चाहती है, किन्तु सबका ही अब एक ही स्वर है। सब कृष्णचन्द्र के आने की ही बात कहते हैं।

'सबका पुण्य ही उसे प्रसन्न रखेगा। मैया के हृदय का सच्चा विश्वास है सबका प्रेम ही उसे यहाँ ले आवेगा। मुझ गँवार को तो अपने बच्चे से भी स्नेह करना नहीं आया-'मैं तो उस पर अपना अधिकार ही जताती रही।'

'वह आवेगा-अपनी मैया को वह भूल नहीं सकता।' गोपियाँ मैया को समझाने लगती हैं, यदि मैया व्याकुल होकर रुदन करने लगे-'ब्रजेश्वरी! हमें भी आपकी ही कृपा से, आपके ही प्रसाद से उसका चन्द्रमुख देखने को मिलेगा।'

सचमुच मैया की पादरेणु को प्राप्त किये बिना बालकृष्ण की झाँकी

कोई कैसे प्राप्त कर सकता है। गोपियाँ मैया को आश्वासन तो देती ही हैं, मैया स्वयं उनके लिए आश्वासन है।

बालिकाएँ

वृहत्सानुपुर (बरसाने) की बालिकाएँ और नन्द ग्राम की भी हैं। कन्हाई को सर्वस्व देकर जो उसकी हो चुकी सर्वदा को और जो उसे भैया कहकर उसके भ्रातृ प्रेम की भाजना थी, वे भी। मैया के समीप अधिक आती हैं इनमें वे जो श्याम को·मैया कहती हैं। लेकिन बरसाने की भी बालिकाएँ यदा-कदा आती ही हैं।

बालिकाएँ आती हैं, वे श्याम को कुछ भी मानती हों, मैया के समीप प्राय: एक ही आग्रह लेकर आती हैं- श्रीकीर्तिकुमारी की दशा देखी नहीं जाती है। आप उन्हें कुछ दिन को अपने समीप बुलालें। आपके समीप आकर कदाचित उन्हें कुछ शान्ति मिले।'

बालिकाओं में किसी को अपनी चिन्ता नहीं है, किन्तु सबको श्रीवृषभानुकुमारी की ही चिन्ता घुलाये देती है। मैया तो पगली हो रही है। वह जो बालिका आती है, उसी को गोद में खींचकर बैठा लेती है उसी की ठुड्डी उठाकर उसका मुख देखने लगती है और अश्रु गिराती है।

'बेटी! तुम आ गयीं इस अभागिनी के समीप, यहीं इसका सौभाग्य।' मैया तो अब अपनी देवरानी की पुत्री अजया को भी पहिचानती नहीं लगती। वह तो दीर्घश्वास लेकर कहती है-'मैं अब किसके सहारे किसी को बुलाऊँ? किसी कन्या के पिता क्यों मेरी बात सुनेंगे? कोई क्यों इस सूने घर में अपनी पुत्री भेजेगा?'

'मुझे कोई बुलाने की आवश्यकता है।' नन्दग्राम की बालिकाएँ हँस नहीं पाती मैया की अवस्था देखकर, किन्तु दु:खी स्वर में कहती तो हैं ही-'कन्हाई भैया नहीं है तो अब यह घर भी मेरा नहीं रहा?'

'बेटी! घर तो तेरा ही है।' मैया चौकती है। कहने वाली बालिका का मुख फिर देखती है और उसे हृदय से लगाती है-'नीलमणि रहे या न रहे, तेरे

स्वत्व पर क्या प्रभाव पड़ता है? लेकिन मेरी इस बेटी के विवाह में वह भाई का स्थान लेने आगे नहीं बढ़ेगा यह सोचकर मेरा हृदय दो टूक होता है।'

वह आवेगा-आकर ही रहेगा। बालिका कहकर स्वयं संकुचित होती है-'मेरे बहुत से भैया हैं तो क्या हुआ, कन्हैया भैया अवश्य भैया दूज को मेरे यहाँ मोदक खाने आवेगा।'

'हम तो आपकी सेविकाएँ हैं' बालिका बरसाने की हुई तो लज्जा से लाल मुख नीचे करके भी मैया के चरण पकड़ लेगी-'आपके इन चरणों की सेवा का सौभाग्य हम नहीं छोड़ेंगी। अब हम किसके सहारे आपके बुलाने की प्रतीक्षा करती बैठी रहेंगी। आप बुलावें-न बुलावें, हम आपके इसी गृह की दासियाँ हैं, किन्तु श्रीकीर्तिकुमारी की व्यथा सही नहीं जाती।'

'कितनी साध थी मेरी-'मैया के नेत्र अखण्डधारा वृष्टि करते हैं-'सखि कीर्तिदा ने वचन दिया था। उनकी लक्ष्मी सी कन्या इस भवन में वधू होकर आती। कितनी कितनी बहुएँ लाने की उमंग थी मेरे मन में। भाग्यहीना के मनोरथ दैव से देखे नहीं गये।'

'बालिका यदि ब्रजराज के गृह जा सकती, सम्भव है, कुछ कम होता इसका शोक।' बरसाने की चर्चा भी बालिकाएँ सुनाती हैं-'वृषभानु बाबा और कीर्ति मैया भी अनेक बार कहते हैं-'ब्रजेश्वर बुलाने की चर्चा करने की स्थिति में नहीं है और अपनी कन्या की स्थिति ऐसी हो रही है कि उसे पल भर को नेत्रों से दूर किया नहीं जा सकता। नन्दग्राम भेजने की चर्चा सुनकर उसका शोक बढ़ सकता है। उसका जीवन तो अभी ही संदिग्ध हो रहा है।'

'मैया! तुम उन्हें बुला लो।' बालिकाएँ बार-बार अनुरोध करती हैं। बरसाने की और नन्दग्राम की भी बालिकाएँ।

'मैं किस मुख से बुलाऊँ?' मैया के नेत्र फटे-फटे हो उठते हैं-'वह सुमन कोमल बालिका यहाँ खुलकर रुदन भी नहीं कर सकेगी। मैं क्या कहूँगी उसे? कौन सा सुख रहा है मेरी इस जली गोद में जो देने को मैं उस भोली बच्ची को बुलाऊँ यहाँ? यहाँ जो दावाग्नि दहक रही है, उसका ताप उससे सहा नहीं जा सकता।'

'मेरा लोभ असीम था। मुझे विधाता ने सृष्टि का एक सबसे सुन्दर पुष्प दिया था और मैंने बरसाने की दूसरी कमलिनी पाने की आशा कर रखी थी।' मैया का उन्माद जाग जाता है बार-बार-'मैं अभागिनी हूँ। मेरे अंक में कोई सुरक्षित नहीं रह सकता। नीलमणि मथुरा में प्रसन्न रहे। देवी देवकी उसे स्नेहदान करें। कीर्तिदा के पुण्य से जो उनके अंक में आयी, उनका पुण्य ही है कि वह उनके समीप सुरक्षित है। मैं अपनी अमंगल छाया उनकी बालिका पर डालने का साहस नहीं कर सकती।'

'बेटी! तू बरसाने जाकर उससे मिल आ।' मैया अनेक बार नन्दग्राम की बालिकाओं से अनुरोध करती हैं-'उनका समाचार पाकर ही मैं सन्तोष कर लूँगी। वह मेरी कल्याणी...।'

मैया कभी इतना कहने लगती है तो मूर्छा उसे कभी वाक्य पूरा नहीं करने देती।

वसन्त

वसन्त आता है-ऋतुराज वसन्त प्रतिवर्ष ही आता है, किन्तु कहाँ आता है? ब्रज में जब रसराज था वह, बारहों महीने वसन्त पैर तोड़कर बैठा ही रहता था और जब से वह गया, वसन्त को भूल ही गया कि उसे ब्रज में भी आना है। ब्रज में तो पतझड़ जमकर बैठा है-कंकाल प्राय: तरु और लताओं में कंटक ही शेष रहे हैं।

वसन्त आता है- अद्‌भुत है ब्रजधारा, अत: यहाँ अद्‌भुत ढंग से वसन्त आता है। आता है और जाता है। क्षण में वसन्त, क्षण में प्रचण्ड ग्रीष्म। लहराती लताएँ, झूमते तरु, गूँजती कोकिल की काकली कब किस क्षण प्रकट हो जायेगी और कब केवल निष्पत्र खेजड़ी, करीर, बबूल ही सर्वत्र दृष्टि पड़ेंगे, कोई कह नहीं सकता।

वसन्त आता है-ब्रजधरा पर भी वसन्त आता है, क्योंकि प्रेम की गति ही अटपटी है। एक को मिलन स्फुरित हो रहा है तो दूसरा वियोग-दग्ध हो रहा है। ऐसा भी होता ही है कि वृन्दा देवी-ब्रज की अधिदेवता श्यामसुन्दर का

साक्षात् पाकर आपाद मस्तक पुष्प सज्जा से अलंकृत हों श्रीब्रजेश्वरी अपने अंकधन को अपने समीप न पाकर तड़प रही हों। मैया कोकिल की 'कुहू' पपीहे की 'पीकहाँ' सुनती है अथवा पुष्प देखती हैं तो सिर पर दोनों कर पटककर मूर्छित हो जाती है।

'नीलमणि! बेटा नीलमणि! बचा लो गोकुल के अपने लोगों को। दिशाएँ जल रही हैं। दावाग्नि दौड़ा आ रहा है।' प्रफुल्ल पलाश देखकर मैया चीत्कार करती है। दोनों करों से नेत्र बन्द करके बैठ जाती है। पुकारती रहती है-'नेत्र बन्द कर लो सब। शीघ्र नेत्र बन्द कर लो।'

'जल जाने दो-सब भस्म हो जाने दो।' उन्मादिनी का ठिकाना तो नहीं है कि कब कैसे भाव उठेंगे इसके मन में। क्रन्दन करती कहेगी-'हाय! हम अभागों की रक्षा के लिए मेरा सुकुमार अग्निपायी बना। उसे दूर लेजाओ। मत आने दो इधर। किसी के बचे रहने की कोई आवश्यकता नहीं है।'

'जीजी! मैं अपने नीलमणि के लिए पालना सजाऊँगी। आप थोड़े किसलय, पुष्प ला दो मुझे!' कोई भी तकिया गोद में लिए, उसे पीताम्बर में लपेटे अञ्चल से ढकती मैया चाहे जब पुकारने लगती है। जिसे अब भी अपना मोहन नन्हा शिशु लगता है, तकिया में उस शिशु का भ्रम होता है, वह कैसे स्मरण रखे कि माता रोहिणी ब्रज में नहीं है।

'तुम सब पालना झुलाती रहो। नीलमणि जाग जाये तो मुझे पुकार लेना। मैं इसके लिए थोड़े-से नन्हे कुसुम स्वयं चुन लूँ।' गोद के तकिये को वैसे ही पालने में पौढ़ा कर, थपकाकर, लोरी सुनाकर मैया चाहे जब सेविकाओं को, गोपियों को बुलावेगी। सावधान करेगी। सुन्दर सुरंग कुसुम देखते ही स्वयं चुनना चाहेगी या अपने नीलमणि के लिए कुसुमाभरण बनाने बैठ जायेगी।

'कोकिल आ! आजा पपीहे! श्यामसुन्दर तुम्हारा स्वर सुनकर प्रसन्न होगा।' कभी आँगन में दाने डालेगी, फल रखेगी-'अभी वह सो रहा है।'

'मेरे लाल! देर हो गयी तुझे सोये।' बहुत दारुण क्षण होता है जब मैया स्तनपान कराने को व्यग्र होती है। 'देवि! यह तो आपका ही तकिया है।' अनेक बार गोपियाँ, ब्रजेश्वर, सेविकाएँ बाध्य होती हैं यह बतलाने के

लिए। जहाँ तक विवशता ही न हो, कोई यह कहना नहीं चाहता। मैया भूली रहे, सबको इसी में भला लगता है, किन्तु कभी स्थिति विवश करती है। इतने पर भी सेविकाएँ बहुत बचाती हैं 'आपके कुमार तो बड़े हो गये हैं। वे गोचारण करने जाते हैं।'

'यह तकिया है?' मैया को विश्वास नहीं होता। यह धीरे से पीटपट हटाती है, ऐसे जैसे शिशु का मुख देख लेना चाहती हो। खुलकर हँसती है-'अरे! मैं भी कितनी पगली हूँ।'

लेकिन यदि सायंकाल हुआ, बहुत प्रातः हुआ तो गोचारण का बहाना नहीं चल पाता। मैया मस्तक पर या वृक्ष पर कर पटककर मूर्दित हो जायेगी 'हा! नीलमणि!'

वसन्त पद-पद पर कन्हाई का स्मरण कराता है। कभी भ्रमर गुञ्जार करेंगे, कभी कोयल कुहुकेगी, कभी पवन सुरभि लेकर आवेगा। मैया किसी क्षण दौड़ पड़ेगी वन की ओर 'नीलमणि आ रहा है।'

मैया को लगता है कि भ्रमर, कोकिल, प्रभृति सब उसके लाल के स्वागत में ही बोलते हैं। पवन शीतल सुरभित श्याम के आये बिना हो नहीं सकता। ब्रजधरा का सत्य भी तो यही है।

ग्रीष्म

विनयशील व्यक्ति जैसे स्वभाव त्यागकर क्रोध से प्रचण्ड हो उठे, ब्रज में वसन्त अब ग्रीष्म बन जाता है। कन्हाई के रहते तो किसी को पता नहीं लगा कि ग्रीष्म ब्रज में ब्रज आता है, किन्तु अब तो चैत का उत्तरार्ध ही तप्त करने लगता है। पृथ्वी दिन के प्रथम प्रहर में ही यात्रा के अयोग्य हो जाती है। मार्तण्ड की किरणें मानो विष-वर्षा करती हों और वायु झञ्झा बनकर सर्प श्वास के समान 'सूं सूं' करता चलने लगता है। वह सुरपति का शासक जब ब्रज में नहीं है, वायु अथवा भास्कर क्यों यहाँ संकोच करें।

'बालकों को वन में-से लौटा लाओ।' मैया सूर्योदय के तनिक ही पीछे सेवकों से आग्रह करने लगती है-'इस ग्रीष्म में महर पता नहीं गायों को

चरने छोड़ते ही क्यों है। इतने ताप में वन में तृण बचे होंगे ?'

'गायें कुञ्जों में बैठी रहती है दोपहरी में श्रीब्रजराज या सेवक समझाते हैं-'उन्हें वन में न भेजा जाये तो वे स्वस्थ नहीं रहेंगी।'

'गर्मी में बड़े गोपों को गोचारण के लिए जाना चाहिए।' मैया का दूसरा आग्रह है बालकों में समझ कितनी है। वे धूप में दौड़ते फिरेंगे। पृथ्वी तप्त हो रही है और वायु कितनी उष्ण है, नीलमणि इतना चपल है कि वह क्या बालकों की बात मानेगा ? उसका सुकुमार शरीर इतनी विषम वायु-लू कैसे सह सकेगा ? वन में वे सब कच्चे फल खायेंगे ?'

'श्रीकृष्णचन्द्र तो मथुरा में हैं।' मैया बहुत हठ करने लगती है। बहुत दु:खी होती है, तब सेवकों को कहना पड़ता है।

'हाय ! इस ग्रीष्म में वह नगर में हैं!' मैया उन्माद में बोलने लगेगी यदि मूर्छित न हो जाये-'नगर के लोग कभी नहीं समझ पाते कि पाषाण के स्फटिक के भवन ग्रीष्म तथा शीत दोनों में कष्टप्रद होते हैं। उसे अब वहाँ कुञ्ज की छाया भी दुर्लभ हो गयी। रात्रि में भी वहाँ तो उष्ण वायु चलती होगी।'

'मैं उसे रात्रिभर व्यजन करती थी। तनिक व्यजन शिथिल होता था तो वह जाग पड़ता था।' मैया की चिन्तवनधारा कब किधर मुड़ पड़े, कुछ ठिकाना नहीं है-'देवकी माता सही, किन्तु उसे क्या पता कि उसका लाल तनिक भी उष्णवायु नहीं सह सकता।'

उस अग्नियामी ने ब्रज में भले सबके सम्मुख दो-दो बार दावानलका पान किया हो, किन्तु इस प्रेम भूमि में किसी को स्मरण नहीं कि कन्हाई में कोई ऐश्वर्य भी है। मैया को स्मरण आता है-'तनिक भी उष्ण दूध नीलमणि पी नहीं पाता था। धारोष्ण दूध से थोड़ा भी अधिक उष्ण हो वह अधर फढ़काने लगता था। उसके हाथ में दूध का पात्र न दो तो मानेगा नहीं और दूध तनिक भी उष्ण हुआ तो पात्र ही गिरा देता था मथुरा में उसे निद्रा कैसे आती होगी ?'

'मैं कहाँ कहती हूँ कि देवकी उसकी मैया नहीं है। मैं उसके मथुरा रहने का कहाँ विरोध करती हूँ।' मैया अत्यन्त दयनीय होकर ब्रजेश्वर के चरण

पकड़ लेती है- दो छकड़े नियुक्त कर दो। नीलमणि सायंकाल आ जाया करे यहाँ। मैं उसे रात्रि भर व्यजन करूँगी। रात्रि में तो वह सुख से सो सकेगा। प्रात: मथुरा जाने को वह जब कहेगा, मैं कभी मना नहीं करूँगा।'

'मथुरा में अर्धरात्रि तक तो राजसभा में बैठना पड़ता है उसे।' ब्रजेश्वर समझाते हैं 'प्रात: ब्रह्ममुहूर्त में उठ जाना है। यहाँ आवे तो निद्रा का समय भी उसे नहीं मिलेगा।'

'जरासन्ध आने ही वाला है।' यह सब सूचना देने का साहस कोई नहीं करता कोई नहीं कहता-'मथुरा के चारों ओर जरासन्ध की सेना के सैनिक, अश्व, गज आदि के शव बिछे हैं। रक्त की दलदल है। मथुरा अगम्य हो चुकी है।'

'हाय! मेरा लाल मुर्दों से घिरे नगर में है। इतनी दुर्गन्धि में उसे रहना पड़ रहा है।' यह कल्याण भी मैया के लिए असह्य है। उसके प्राण दो क्षण नहीं टिकेंगे यह सुनकर। अत: कोई जरासन्ध के आक्रमण अथवा पराजय के पश्चात् की स्थिति की चर्चा उसके सम्मुख नहीं करता।

'आपके कुमार कहीं कुञ्ज में अथवा गुफा में बैठे होंगे।' सेवक मैया को इसी प्रकार समझा पाते हैं-'इस अंधड़ में, इस दोपहरी में उन्हें वहाँ से उठकर भवन तक आने को कहना उचित नहीं है। इस समय तो उन्हें वहीं रहना चाहिए।'

'उसे देख आओ। उसे मनाकर आओ कि वह छाया से धूप में न आवे।' जब आँधी या बवण्डर आता है, मैया सेवकों को वहाँ से भेजे बिना मान नहीं सकती। वह अंधड़ देखते ही चिल्लायेगी। यह दैत्य न हो। मेरे नीलमणि को उठाकर उड़ न जाये।'

तृणावर्त का आतंक उसके मन से अब भी गया नहीं।

वर्षा

वर्षा कन्हाई को सदा प्रिय रही है। यह घनश्याम वर्षा में भीगते हुए नाचने, छपाछप करते चलने का व्यसनी हैं। मैया कहती है 'नीलमणि तो घुटनों सरकने लगा, तभी से पानी के पास ही दौड़ता था। वर्षा के समय

कक्ष से निकल भागना स्वभाव है उसका।'

पता नहीं कन्हाई कहाँ भीगता होगा। जो घर में ही वर्षा के समय बैठता नहीं था, बाहर भीगने भाग जाता था, वह वन में गुफा में बैठा रहेगा? मैया का कहना है- 'सब बालक ही तो हैं। सब भीगते होंगे। सब भीग-भीग कर नाचेंगे और पानी में दौड़ते जहाँ-तहाँ गिरेंगे।'

'सब भीग गये होंगे। उनके कपड़े तो कोई ले जाओ।' वर्षा प्रारम्भ होते ही मैया कछनियाँ, पटुके ढूंढ़ने लगती है। 'हम जब तक पहुँचेंगे, उनके पटुके, कछनी सब सूख चुकी होंगी।' सेवक किसके वस्त्र ले जाये? लेकिन मैया से वे कहते हैं-'वर्षा बन्द होते ही गायें इधर-उधर चरने दौड़ जाती है। बालक आम या जामुन चुनने में लग जाते हैं। वे इस समय कहाँ होंगे, कोई अनुमान नहीं है।'

अनेक बार झड़ी लगती है। मेघ रात-दिन बराबर बरसते हैं। वर्षा जब देर तक नहीं खुलती, मैया बहुत बेचैन होती है-'ब्रजेश्वर ऐसे दिन भी बालकों को रोकते नहीं हैं। ऐसी वर्षा में गायें क्या चरती होंगी।'

सचमुच भैंस की भाँति पानी में नेत्रों तक मुख डुबोकर गाय तो नहीं चर सकती। गाय कहाँ जल में डूबी घास चरती हैं, किन्तु वर्षा से भीगे वन में उन्हें दौड़ना प्रिय है।

वर्षा बहुत वेग की हो तो मैया अत्यन्त व्याकुल हो जाती है-'पता नहीं नीलमणि कहाँ होगा।' ऐसी अवस्था में गोपियों को स्मरण दिलाना पड़ता है-'ब्रज के वे जीवनाधार तो मथुरा है।'

अच्छा है, तभी मेघ इतनी तीव्र वर्षा कर रहे हैं।' मैया फटे-फटे नेत्रों से आकाश को घूरने लगती है-'बरसो खूब बरसो। अब अपने जीकी कर लो। अब यहाँ कौन बैठा है जो गिरिराज को उठाकर ब्रज को बचा लेगा। अब सबको बहा दो। पिछली सब कोर-कसर पूरी कर लो।'

कुछ ठिकाना नहीं है कि कब गृह की सामग्री आँगन में फेंकने लगे अथवा स्वयं बाहर निकल पड़े-'लो मुझे मार दो बज्र गिराकर। मुझे बहा दो।'

सेविकाओं को सम्हालना पड़ता है। गोपियाँ पकड़ती हैं। कोई अश्रु-भरे दृग से कहती हैं–'ब्रजेश्वरी! आपके मयूरमुकुटी कुमार आवेंगे-आवेंगे ही। आपको इस अवस्था में देखेंगे तो बहुत दु:खी होंगे।'

'वह आवेगा? आ रहा है? मैया को लगता है कि कन्हाई अभी इसी क्षण आ खड़ा होगा। वह झटपट भीतर भागती है। अपने गीले वस्त्र बदलती है। इधर उधर अस्त-व्यस्त वस्तुएँ ठीक करने में लग जाती है।

'वह आता होगा।' मैया क्रो लगता है कि वह आज भी दौड़ा आवेगा और गिरिराज को उठाकर सबको उसके नीचे तत्काल चलने को कहेगा। वह पदार्थ समेटने लग जाती है।

'हाय! सुकुमार नीलमणि इतना भारी पर्वत उठाये खड़ा रहा।' बीच में ही थकित होकर धम से बैठ जाएगा, जैसे शरीर में हिलने की भी शक्ति न रह गयी हो।

'नीलमणि को फिर पर्वत उठाने नहीं दूँगी।' मैया दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर निश्चय करती है–'कुछ भवन गिर जायें, कुछ सामग्री बह जाये, इसके लिए उसे इतना श्रम नहीं करने दिया जा सकता।'

'गिराओ-वज्र गिराकर देख लो।' बिजली कड़कते ही उठकर ऊपर मुख करके डाँटेगी–'बहुत धृष्ट हो गये हो? तुम्हारी घुड़की से मैं अपने नीलमणि को पर्वत नहीं उठाने दे सकती।'

'द्वार बन्द कर दो। सब द्वारों के समीप खड़े रहो। श्याम को भवन से बाहर मत जाने देना।' मैया को भूल ही जाता है कि कृष्णचन्द्र भवन में नहीं हैं।

'कहाँ गया नीलमणि?' मैया एक से दूसरे कक्ष में ढूंढ़ती दौड़ने लगेगी चाहे जब और सेविकाओं पर खीझेगी–'तुमने उसे निकलने क्यों दिया? वह इस वर्षा में भीगता होगा। वह गिरिराज उठाने जा रहा होगा।'

'वे मथुरा हैं। अभी आये नहीं हैं।' सेविकाएँ दु:खी मन से स्मरण कराती हैं। 'अच्छा है। मथुरा नगर है। उसके भवन दृढ़ होंगे। नीलमणि वहाँ वर्षा में सुख से होगा।' मैया को यह भावना बहुत सन्तुष्ट करती है कि उसका लाल सुख से होगा।

आँधी

वर्षा में, गर्मी में, शीतकाल में, कभी भी आँधी आ सकती है। वैसे आँधी का प्रधान समय गर्मी और वर्षा है, किन्तु वायु का वेग बढ़ते ही जिसे आँधी का भ्रम होता हो, उसके लिए तो सब ऋतुएँ आँधी की है। मैया को तो वायु तनिक तीव्र हो और आँधी का भ्रम हुआ करता है।

काली, पीली या लाल धूलि से आकाश को ढक देने वाली आँधियाँ कम आती है। ऐसी आँधी में तो मैया 'तृणावर्त-तृणावर्त' करती भागती फिरती है। वह चीखेगी-'आ गया आ गया मेरे लाल को उड़ा ले जाने वाला राक्षस। यह वही चक्रवात है। सब द्वार बन्द कर दो।'

'नीलमणि कहाँ है?' मैया कभी कोई तकिया अथवा मसनद दुबकाते फिरेगी या एक दूसरे कक्ष में दौड़ेगी-'देखो तो वह गोष्ठ में चला गया लगता है। उसे शीघ्र ले आओ।'

'वन में भागकर जाओ।' मैया की आशंका को सर्वथा निराधार नहीं कहा जा सकता-'आँधी आ रही है। बालक कच्चे-पक्के फल समेटने वृक्षों के नीचे दौड़ेंगे। उन्हें चोट लग सकती है। नीलमणि को ले आओ।'

कन्हाई अत्यन्त सुकुमार है। ब्रज में वह था तब आँधी आने पर गोप भी सशंक हो उठते थे। श्याम एक बार एक जामुन के गिरने का आघात भी सह नहीं सकता। गोप बालक उसे ऐसे समय वृक्ष के नीचे नहीं जाने देते थे। आँधी में फल ही गिरेंगे, शाखा टूटकर नहीं गिरेगी या वृक्ष नहीं गिरेगा, यह कोई आश्वासन तो नहीं है। अत: मैया का आशंकित होना ठीक ही है। उसे तो यही लगता है कि उसका नीलमणि वन में है।

'उस राक्षस को तो आपके नीलमणि ने शैशव में ही मार दिया था।' एक गोपी ने कह दिया एक दिन ऐसे ही विषम समय में। 'धिक्कार है मुझे! मैं उसकी धाय कहलाने योग्य भी नहीं हूँ। सब मुझ पर थूको कि मैं अपने पुत्र का ही भार नहीं सह सकती। मैं उसे आँगन में छोड़ आयी।' मैया इस प्रकार क्रन्दन करने लगी, जैसे तृणावर्त आज अभी ही कन्हाई को आकाश में उड़ा ले गया हो।

'बवण्डर में उसे आँगन में डालकर मैं घर में छिपने गयी थी।' मैया को सम्हाला न जाये तो वह पृथ्वी पर मस्तक पटक देगी-'यह अधमा अब भी आशा करती है कि वह इसे माँ समझता रहे। लेकिन वह है ही इतना भोला कि उसके ध्यान में इसकी छुद्रता नहीं आवेगी।'

बड़ी कठिनाई हुई उस दिन मैया को सम्हालने में। तब से मैया को तृणावर्त-वध का स्मरण कोई नहीं दिलाता। 'वह क्या करता होगा? कहाँ होगा इस आँधी में?' अनेक बार मैया गुमसुम बैठ जाती है।

'मथुरा महानगर है। वहाँ ऊँचे-ऊँचे भवन हैं।' एक दिन श्रीब्रजराज ने समझाया था-'वहाँ आँधो का वेग इतना कठिन नहीं रहता। वहाँ लोग गृह-द्वार बन्द करके बैठ जाते हैं।'

'वह भी गृह-द्वार बन्द करके बैठ जाता होगा।' मैया अपने आप चाहे जब बोलने लगती है-'तब कोई कार्य न होने पर उसे स्मरण आता होगा कि उसकी गायें आँधी में वन में भागती-दौड़ती होंगी। उसके सखा...उसे ब्रज का, इस अभागिनी मैया का स्मरण आता होगा?'

श्याम को स्मरण आवेगा और उसके कमलदल विशाल लोचन अश्रु-विमोचन करेंगे, यह कल्पना बहुत दु:खद, अत्यन्त असह्य है, किन्तु इसका कोई उपाय भी तो नहीं है। कभी मैया 'हाय-हाय' करके छटपटाने लगती है, कभी मूर्छित हो जाती है, कभी प्रलाप करने लगती है।

'पवनदेव! तुम सबके प्राण हो। मेरे प्राण ले लो, किन्तु मेरे नीलमणि के लिए सदा सुखद बने रहो।' मैया मनौती करती है और वासुदेव की प्रसन्नता के लिए धूप जलाती है। कभी कुछ अग्नि में डालती है, कभी कुछ।

'वह बन्दरों को माखन बाँटता था, मैं कर्मजली छड़ी लेकर दौड़ी थी उस पर।' मैया कभी सिर पीट लेती है, कभी मोदक फेंकने लगती है बन्दरों को-'पवनदेव! तुम्हारे पुत्र हैं हनुमान, मैं उनके बानरों को प्रतिदिन खिलाऊँगी, मेरे लालके लिए कभी प्रतिकूल मत बनना।

'वह आ रहा है, उसकी अंग-गन्ध अभी आयी है।' मैया चाहे जब उल्लसित होकर द्वार की ओर भागती है। इसे वायु में आयी प्रत्येक गन्ध

अपने नीलमणि की अंग-गन्ध ही लगती है। अतः वायु मैया को प्रिय है, किन्तु वायु का वेग बढ़ते ही उसकी व्याकुलता, आशंका भी बढ़ जाया करती है।

शरद

विचित्र स्थिति है, शरद जैसी सुहावनी ऋतु में भी मैया को चैन नहीं। खञ्जन देखते ही इसे अपना खञ्जन नेत्र स्मरण आना है। कहती है-इतना स्वच्छ आकाश है, पथ-पंक सूख गया है। नीलमणि आज तो नहीं आया।'

एक-एक दिन, एक-एक घटी की आतुर-प्रतीक्षा, प्रतीक्षा करते प्यासे प्राण, कोई कैसे इस अवस्था को समझ सकता है?

'यहाँ था तब गोपियों के यहाँ कुछ-न-कुछ ऊधम करता ही रहता था।' मैया मस्तक पकड़कर बैठी रोती है- 'अब इस अभागिनी यशोदा को कोई किस बात का उलाहना देने आवेगी। बहुत खीझती थी उस पर, अब अपने फूटे कपालपर बैठी खीझती रही।'

'वह बहुत संकोची है। अपनों के बीच में ही खुल पाता है।' मैया का मन मथित होता रहता है-'मथुरा में मन मारे बैठा रहता होगा। वहाँ किसी से खुलकर बोल भी नहीं सकेगा।' गोपियों को ही नहीं, मैया को भी बहुत प्रिय थे मल्लिका-सुमन। इन उज्जवल सुमनों की माला मैया अपने केशों में लगाती थी। अब तो ब्रजमें कोई नववधू भी सुमन श्रृंगार नहीं करती। शरद में मल्लिका फूलती है, ऐसी फूलती है कि उसमें जितने पुष्प भर जाते हैं। रात्रि में तारक भरे गगन की मानों स्पर्धा करती है। आँगन में लगी मल्लिका के सुमन झड़ते रहते हैं। अब कोई चार पुष्प भी इस लतिका के चुनती नहीं है।

'नीलमणि अपनी नन्हीं अञ्जली भर पुष्प लाता था और मेरे केशों में उलझाने लगता था।' मैया कभी लतिका के समीप जा खड़ी होती है-'वह मेरी वेणी में लगी माला से कभी दो पुष्प निकालकर अपने केशों में लगाता था।'

'तू अब किसके लिए इतनी पुष्पित होती है? मैया लतिका से ही पूछने लगती है-'मैं किसको आगे बैठाकर तेरे पुष्पों से उसका केश सजाऊँ?'

नीलमणि आता होगा ?' मैया कभी स्वयं पुष्प-चयन करने लगती है और कभी मल्लिका के नीचे वहीं कोने में बैठी एकटक घूरती रहती है उस लता की ओर।' वह चला गया तो कोई अकेला भ्रमर भी इतने सारे मादक सुरभि-भर पुष्पों पर भटककर नहीं आता। वह था तो भ्रमरों के झुण्ड उसके आसपास गूँजते मण्डराते थे।'

'नीलमणि आता होगा।' मैया रात्रि में देर तक दीपक जलाये व्यालू लिये बैठी रहती है-'उसे चन्द्रिका-धवल रजनी में यमुना पुलिन पर घूमने की धुन है। दिन भर गोचारण से थकां आता है, फिर भी भाग जाता है। इतनी देर हो गयी, अब आता ही होगा।'

गोपियों को साहस नहीं होता। ब्रजेश्वर किसी प्रकार समझाते हैं-'श्याम आवेगा ही, किन्तु मथुरा से रात्रि में तो नहीं आ सकता। अब तुम शयन करो।'

'वह मथुरा चला गया ?' मैया ऐसे चौक पड़ती है, जैसे यमुनातट तक गया उसका लाल उससे पूछे बिना मथुरा चला गया हो।

मैया कहाँ व्यालू करती है। उसे दूध तो पिलाया ही नहीं जा सकता। दूध पीने को कहने पर मूर्छित होकर गिर न पड़े तो क्रन्दन करेगी-'यह मरी वृद्ध बुढ़िया ही तो दूध पीने को रह गयी है। इसके लाल को कौन वहाँ मनुहार करके दूध पिलाता होगा ?'

निद्रा मैया से जैसे डरकर भागती हो। यह रातभर में जाने कितनी बार आँगन में आकर बैठती है और कितनी बार कक्ष में जाती है। दासियाँ हठ करके लिटा दें तो थोड़ी देर नेत्र बन्द करके पड़ी रहेगी और फिर चौंकर उठ बैठेगी। शशि की ओर देखती रहेगी अपलक-'चन्द्र ! मेरा चन्द्रमुख नीलमणि सो रहा होगा। उसे वहाँ नि:संकोच निद्रा आती है ? उसे मधुर स्वप्न देना।'

अनेक बार मैया भूल ही जाती है कि कन्हाई मथुरा है। वह आँगन से कक्ष में आती है। अपनी शैया देखती है और फिर किसी भी सेविका को जगाने लगती है- 'नीलमणि शैया पर नहीं है। वह उठकर कहाँ चला गया ? वह इतना भोला है कि उठकर नींद में ही चल देता है मुझे ढूँढने। हाय ! मैं

क्यों उठकर आँगन में गयी। अब कहाँ ढूँढ़ूँ उसे ?'

सेविकाएँ न सम्हालें तो मैया रात्रि में ही भवन से निकल पड़े कन्हाई को ढूँढ़ती-पुकारती। लेकिन इससे यह कहना भी तो इसे व्याकुल ही करेगा कि वे मेघसुन्दर मथुरा हैं।

कभी सारसों की पंक्ति उड़ती देखेगी तो उन्हीं से कहने लगेगी-'तुम लोग मथुरा जा रहे हो। मेरे नीलमणि से मिलकर कहना कि ब्रज में सब प्रसन्न हैं। उसे कोई दु:खद समाचार देकर खिन्न मत बनाना।'

शिशिर

विकट सर्दी पड़ती है। मैया को उठाना पड़ता है। सेविकाएँ प्रार्थना करती हैं-'ब्रजेश्वरी! प्रभात हो गया। आपको अब शैया-त्याग करना चाहिए।'

'मैं उठूँगी तो नीलमणि जाग पड़ेगा।' मैया अपने अंक में तकिया दुबकाए, उसे थपकी देती रहती है। 'वह तो तकिया है।' अन्तत: सेविकाओं को कहना ही पड़ता है।

'तकिया ?' मैया झुककर मुख देखना चाहती है और तकिया देखकर झटपट उठ खड़ी होती है। इसे अपने आलस्य पर खीझ आती है, किन्तु कोई बात स्मरण रखना इसकी शक्ति में नहीं रहा है, अत: शीघ्र ही सेवकों पर खीझने लगेगी।

'इतनी सर्दी में भी महर को बालकों पर दया नहीं आती। स्वयं उन्हें तो बड़े प्रात: यमुना-स्नान का व्यसन है ही, बालकों को भी जगा देते हैं। सुकुमार बालकों को सर्दी लग जायेगी, यह बात ही नहीं समझते।' सेवक-सेविकाओं के समीप इसका कोई उत्तर नहीं है।

'वन में खुली धूप में आप के कुमार खेलेंगे।' कोई भी गोपी आश्वासन देगी। 'नीलमणि खेल में लगने पर सब कुछ भूल जाता है। अन्तत: बहुत देर धूप में रहने पर आजकल भी कष्ट तो होता ही है।' बालकों को कहाँ स्मरण रहना है कि उन्हें कब छाया में चले जाना चाहिए।' मैया को कोई आश्वासन सन्तुष्ट नहीं करता।

'वन में वृक्षों के नीचे धूप-छाँह में खेलते बालक प्रसन्न होते होंगे।' कोई गोप या गोपी मैया को समझावेगी-'सायंकाल शीघ्र आ जायेंगे। आजकल दिन होते ही कितने बड़े हैं। दिन चढ़ने पर जाते हैं। वन में पहुँचते ही दोपहर हो जाती है। थोड़ी देर बालकों को खेलना चाहिए।'

'नीलमणि को खेलने से मैं कब रोकती हूँ।' मैया थके स्वर में कहती हैं-'किन्तु वह खेल-खेलकर थक जाता है। सर्दी में भूख लगाती है लोगों को, किन्तु वह एक पक्षी जितना भी नहीं खाता।'

'वह वन में अपनी कमरिया ले जाना ही भूल गया।' मैया श्याम की कोमल काली कमरिया देखते ही किसी को पुकारेगी-'उसे ढूँढकर दे आओ। दाऊ को, भद्र को भी कह आना कि अपने छोटे भाई को सायंकाल लौटते समय इसे उढ़ाकर लावें, नहीं तो उसे सर्दी लग जायेगी। ये बालक तनिक धूप निकलते ही पटुके तक उतार फेंकते हैं।'

'कृष्णचन्द्र अग्रज के साथ मथुरा हैं। वे वन में नहीं हैं।' गोपों को कहना ही पड़ता है, क्योंकि शीतकाल में जब वायु का वेग बढ़ता है, मेघ छा जाते हैं या वर्षा होने लगती है, मैया की व्याकुलता बहुत अधिक बढ़ जाती है।'

'नीलमणि मथुरा है।' मैया एक-एक अक्षर धीरे-धीरे बोलती है, जैसे कुछ समझने का प्रयत्न कर रही हो। फिर रोने लगती है-'वहाँ देवकी उसे प्रात: यमुना-स्नान से कैसे रोक पाती होंगी ? वह मुख धोने को भी उष्णोदक माँगते संकोच करता होगा। शीतल जल से उसके कोमल कर-चरण ठिठुरते होंगे। वहाँ वह किसी की गोद में दुबक कर सायंकाल भी तो नहीं बैठ पाता होगा।'

'मथुरा के बड़े ऊँचे भवन सुनती हूँ। वहाँ धूप काहे को मिलती होगी। नीलमणि दिन-भर छाया में रहता है?' मैया के नेत्र सूखना ही नहीं जानते-'अब वन में वृक्षों के नीचे धूप-छाँह में खेलने का सुख भी उससे छूटा। मेरा नन्हा सा सुकुमार संकोची लाल राज-सभा में सिकुड़ा सिमटा बैठा रहता होगा।

'मथुरा में कहीं धूप मिल सके ऐसा स्थान है?' मैया गोपों से, ब्रजेश्वर से बार-बार पूछती है-'नीलमणि को वहाँ महाराज उग्रसेन बैठने देते होंगे?' कोई उसे हाथ धोने को उष्णोदक देता होगा?'

'उसकी कमरिया यहीं रह गयी। इसे तो मथुरा उसके समीप भिजवा दो।' मैया बार-बार श्रीनन्द बाबा से अनुरोध करती है-'मेरा लाल ठिठुरता रहेगा, किन्तु किसी से कुछ कहेगा नहीं।'

'मथुरा में रत्न, कम्बलों का आभाव नहीं है। वसुदेव जी और महाराज उग्रसेन भी कृष्णचन्द्र को प्राणों के समान मानते हैं।' मैया की समझ में यह बात नहीं आती है, किन्तु वह इसे समझकर विवश बैठ जाती है कि मथुरा में इस प्रकार की गोपों की कमरिया ओढ़ने से लोग उसका उपहास करेंगे। कमरिया मथुरा में काम नहीं दे सकती।'

'उसे बुला लो! इस शीतकाल में चार दिन यहाँ रह कर कुछ खा जाये तो तनिक पुष्ट हो जायेगा।' जैसे कोई बहुत दरिद्र भिक्षुक याचना करता हो, ऐसे स्वर में मैया याचना करती है।

'वह आवेगा स्वयं आवेगा।' बाबा नेत्रों में अश्रु भरकर कहते हैं-'हमारे बुलाने,से उसे संकोच होगा।'

मैया क्या करे? वह भरे नेत्रों से आकाश को घूरने लगती है।

गोष्ठ में

ब्रज की देवता है गायें, अत: गोष्ठ सबसे बड़ा तीर्थ है। वैसे भी गोशाला नित्य पवित्र होती है। गायें सर्व देवमयी हैं। गोपाल अपने शैशव में चाहे जब गोशाला में पहुँच जाने का व्यसनी रहा है तो आश्चर्य क्या।

यह कैसे सम्भव है कि ब्रजेश्वर को गोष्ठ में जाने ही न दिया जाये, किन्तु वे गोष्ठ में जाकर अत्यधिक विक्षिप्त हो जाती हैं। उन्हें लगता है कि गोष्ठ का कण-कण 'गोपाल! गोपाल! पुकारता है। उन्हें ही क्यों पूरे ब्रज के गोपों को, गापियों को भी यही लगता है और केवल नन्द-गोष्ठ में ही नहीं लगता, ब्रज के प्रत्येक गोष्ठ में लगता है।

अब तो गोपियाँ, गोप-कन्याएँ भी अवसर मिलते गोष्ठ में जा बैठता है। गोष्ठ ही सबके उपासना-स्थान तथा एकान्त बैठने के भी स्थान बन गये हैं। तब मैया को ही गोष्ठ में जाने से रोका कैसे जा सकता है।

'यहीं उन्होंने गोबर से भरी टोकरियाँ उठवायीं।' गोष्ठ में पहुँचने पर गोपियों के मन में भी स्मृतियों का मेला लग जाता था-'उन्हें देखकर मैं जान-बूझकर सिरके वस्त्र खिसका देती थी और उनसे ठीक कर देने को कहती थी। वे हँसते आते थे। चाचा-चाची करते थे। कभी वस्त्र और पीछे गिरा देते, कभी इतना लम्बा घूँघट खींच देते जितना कोई नव वधू भी नहीं खींचती।'

'पहिले मुझे माखन दे। मचलते थे और कभी तो मेरा ही दूध पीना चाहते थे।' 'मेरे हाथ गोबर-सने हैं। माखन यहाँ गोष्ठ में कहाँ है।' मैं कहती थी-'गोबर उठाकर घर चलने दो तो माखन दूँगी।'

'मैं तो अभी लूंगा।' उनका मचलना चलता रहता था और मेरे वस्त्र को सिर पर टिकना नहीं था।'

दूसरे गोष्ठों के, दूसरी गोपियों के ऐसे असंख्य संस्मरण हैं। मैया तो गोष्ठ में पहुँचते ही ठिठकी खड़ी रह जाती है। अनेक बार उसे भ्रम होता है कि उसका लाल रुन झुन नूपुर ध्वनि करता उसके सामने से हँसता-किलकता अभी भागा है और जाकर नवजात बछड़ों के मध्य कहीं छिप गया है।

'नीलमणि! तू कहाँ छिपा है?' मैया गोष्ठ में इधर से उधर पुकारती भटकती है-'बेटा! आजा मैं हैरान हो गयी हूँ, थक गयी हूँ। तू आकर स्तनपान कर। मैं तेरे लिए माखन निकालकर आयी हूँ। आ जा मेरे लाल!'

किसी गोबर के तनिक कड़े, बड़े ढेर पर घुँघराली अलकें रखे उस लेटे चन्द्र-मुख की एक झलक, कहीं एक कोने में दोनों पैर फैलाये मध्य में गोबर की छोटी ढेरी को दोनों लाल-लाल करों से थपथपाता, कहीं दाऊ या भद्र के साथ कई बछड़े-बछड़ियों की पूँछ एक साथ पकड़े इधर से उधर बछड़ों द्वारा खींचा जाता, डगमग पग डोलता, हँसता खिलखिलाता-आप इसे मानस भ्रम कहते हैं तो कहें, किन्तु मैया को बार-बार प्रत्यक्ष लगता है।

केवल उसका नटखट अब पकड़ में नहीं आता है। वह भाग जाता है और इन शत-शत बछड़े-बछड़ियों के मध्य छिप जाता है।

'तुम्हारा गोपाल कहाँ छिपा है?' बछड़े, बछड़ियाँ मैया को सूँघ सूँघकर फुदकने लगते हैं, किन्तु इनकी नन्हीं व्याँ, समझ में कहाँ आती है। इनमें अनेकों ने तो उस नवजलधर-सुन्दर को देखा भी नहीं है।

'नीलमणि को ढूँढ़ दो। वह अभी तो यहीं था। मैया गोष्ठ में जो भी सेवक या सेविका मिलती है, उसी से कहती है-'बहुत चपल है। मेरे हाथ नहीं आ रहा है। अभी भूखा है।'

सेवक या सेविका नेत्रों को पोंछते सामने से हट जाते हैं। अपनी स्वामिनी का यह उन्माद उनके लिए असह्य है। मैया भटकते-भटकते थकने लगती है तो कहना ही पड़ता है-'आपके कुमार यहाँ नहीं है। वे मथुरा में हैं।'

'यहाँ नहीं है?' मैया कभी पूरी बात सुने बिना ही लौट पड़ती है भवन में या अन्यत्र ढूँढ़ने। कभी पूरी बात सुन लेती है और जड़मूर्ति के समान खड़ी रह जाता है।

'श्रीकृष्णचन्द्र मथुरा से भी द्वारिका चले गये, यह कहने का साहस मैया से कभी किसी ने नहीं किया। पता नहीं यह समझती भी है या नहीं कि द्वारिका कितनी दूर है। इसे तो मथुरा ही सृष्टि के दूसरे छोर पर लगती है। समीप होती तो इसका लाल अब तक मैया के पास दौड़ आया होता।

'वह आने वाला है।' मैया को प्रत्येक क्षण ऐसा ही लगता है। वह सेवकों, सेविकाओं से कहती है-'गोबर मत उठाओ। उसे गोबर खेलना बहुत प्रिय है। आवेगा तो तत्काल गोष्ठ में भागा आवेगा। दो क्षण यहाँ गोबर से खेलेगा, तब मैं उसे उठा ले जाऊँगी।'

कभी स्वयं गोबर छूकर, हाथ में उठाकर देखती है और दूसरी ही धुन चढ़ती है-'गोष्ठ स्वच्छ कर दो। झटपट गोबर उठा दो। वह आवेगा तो यहीं गोबर में बैठेगा या लेटेगा। मैं उसे झटपट भवन में ले जाना चाहती हूँ।'

यमुनातट

'वह यमुनातट चला गया।' मैया अनेक बार गोपियों को भेजती है। अनेक बार स्वयं उठकर दौड़ जाती है –'उसे स्नान का व्यसन है। पानी में ...रते देर ही नहीं लगती।'

यहाँ नीलमणि आया था?' यमुना पुलिन पर इधर से उधर भटकती ढूँढ़ती है। ऐसे ढूँढ़ती है, जैसे कोई खोई सुई ढूँढ़ रही हो। कोई-न-कोई गोपिका या गोपकुमारी अवश्य मिल जायेगी वहाँ। जल भरने आकर कलश एक ओर रखकर वह अपलक यमुना प्रवाह को घूरती बैठी होगी।

वह क्या उत्तर दे मैया को? घर जैसे काटखाने को दौड़ता है। यमुना तट आती है तो लगता है कि किसी कुञ्ज से वह नवघनसुन्दर अभी सखाओं के साथ निकल पड़ेगा हँसता और उसके कलश पर या तो कंकड़ी मारेगा या लकुट से उसे पानी में ठेलकर ताली बजाता कूदेगा।

मैया पूछती है तो लगता है कि कलश उठाकर पटक दे और पटक दे अपना फूटा कपाल किसी पत्थर पर। इन अभागे कलशों के पीछे उसने इन्हीं ब्रजेश्वरी से कितनी बार उलाहना दिया है। कितनी बार ये उन नीलसुन्दर पर खीझी हैं।

उसे लगता है कि यमुना भी उनके वियोग में रुदन कर रही है। उसमें अब जल नहीं, अश्रुधारा बहती है। कालिन्दी की लहरें पुलिन पर सिर पटक रही हैं।

मैया से क्या उत्तर दे? यमुना-पुलिन स्वच्छ पड़ा है। अब कहाँ पुलिन पर वे वज्र, अंकुश, ध्वज, कमल आदि से युक्त पद-चिन्ह बालकों के पद-चिन्हों में दीख पड़ते हैं।

'वह इधर नहीं आया।' मैया अपने आप कहती है– 'इधर कोई बालक नहीं आया। पता नहीं, सब किधर चले गये। तू क्यों बैठी? तेरे घट उठवा देते हैं?'

'हाय! वह घट उठवा देने वाला आता होता?' गोपी मैया के चरणों पर मस्तक रख देती है। अब झटपट घट भरकर चल नहीं देगी तो यहाँ बैठने

की अपेक्षा सदा के लिए जल में ही समा जाना अच्छा लगेगा, किन्तु यमुना में तो अब उतना जल ही नहीं है। यही अतल गम्भीरा स्वच्छ सलिला यमुना अब अश्रुधारा जैसी अल्प सलिला हो गयी है। इसमें डूब जाने को भी जल नहीं रहा।

कोई मुझे उसका पता नहीं बतलाती मैया अनेक बार दोनों हाथ सिर पर रखकर धप्प से बैठ जाती है। उसका लाल ब्रज में नहीं है। यह स्मरण आते ही उसका शरीर निष्प्राणप्राय हो जाता है। इसे लगता है कि दो डग भी चला नहीं जायेगा।

'अब धूप बढ़ती जा रही है। वायु यहाँ तप्त रेणुका उड़ावेगा।' गोपी हाथ पकड़कर मैया को उठाती है– 'चलिये आपको भवन पहुँचा दूँ।'

'भवन ?' मैया ऐसे पूछती है, जैसे उसे भवन शब्द का अर्थ ही समझ में न आता हो।

'मेरा नीलमणि इसी पुलिन पर बालकों के साथ खेलता रहता था।' मैया पुलिन को घूरती रहती है– 'यहाँ वह घरौंदे बनाया करता था। वे सब एक-दूसरे के अंगों पर रेणुका डालते थे। मैं उसे हाथ पकड़कर यहाँ से ले जाया करती थी।'

' अब मैया का हाथ पकड़कर कोई इसे इस पुलिन से घर ले जाये, यह कितनी बिडम्बना है। पूरा पुलिन ही नहीं, समूची पृथ्वी जैसे नेत्रों के सम्मुख कुम्हार-चक्र के समान घूमती लगती है।

'मुझे यहीं पड़ी रहने दे। यहीं इसी रेणुका में मुझे दब जाने दें।' गोपी का स्वयं का मन भी तो यही पुकार रहा है। इसी रेणुका में शरीर की समाधि बन जा सकती।

'रेणुका तप्त होने लगी है, अब आप उठिये।' गोपी मैया का कर पकड़कर आग्रह करती है–'आपके कुमार आवेंगे और यदि भवन में आपको न पा सके तो यहाँ रेणुका से उनसे भी उठा नहीं जा सकेगा।'

'वह आवेगा-आवेगा ही।' ब्रजेश्वर भी यही कहते हैं। वे तो कभी असत्य नहीं कहते। वह आ रहा होगा-भूखा आया होगा।' मैया हड़बड़ाकर उठती है।

उसे लगता है कि उसका नीलमणि घर आकर उसकी प्रतीक्षा कर रहा होगा।

'तू क्या देखती है?' मैया गोपिका से पूछती है- 'वह तो यहाँ नहीं आया। उसका एक भी पदचिन्ह यहाँ नहीं दीखा मुझे।' गोपिका क्या कहे? वह पता नहीं, किस आशा में बार-बार घूमकर पुलिन की ओर देखती है। पुलिन पर पड़े उनके पदचिन्ह वायु कहीं रहने देता है-काश! एक भी पदचिन्ह वहाँ बचा होता। मैया भी तो बार-बार घूमकर पुलिन की ओर देखने लगती है। आशा की छलना...।

गाय ब्यायी

ब्रज का बड़ा महोत्सव है किसी गोप की गाय का बच्चा देना, क्योंकि गायें ब्रज की देवता हैं, गोपों की सम्पत्ति हैं, सर्वस्व है। गाय ने बच्चा दिया, इसका अर्थ है कि सम्पत्ति बढ़ी, देव-सेवा का अवसर बढ़ा, श्री आयी। द्वापरान्त तक तो मनुष्य भी मर्यादा में ही रहता था, पशु-पक्षी आदि में प्राकृत नियमों का विपर्यय कैसे देखा जाता। गायों के पुष्पिता होने की ऋतु शरद है। फलत: उनके प्रजनन की ऋतु बसन्त और ग्रीष्म है। लाख-लाख गायें, अत: सम्पूर्ण बसन्त एवं ग्रीष्म प्राय: प्रत्येक गोप के यहाँ प्रतिदिन कई-कई गायों का बच्चा देना, लगा ही रहता है।

मैया प्रारम्भ से गाय के बच्चा देने के समाचार को पाकर हर्ष से पगली होती आयी है। किसी की भी गाय ने बच्चा दिया हो, यह तत्काल गुड़, हल्दी आदि एकत्र करने लगेगी और पता नहीं कितनी औषधियाँ डालकर गाय के लिए लपसी पकावेगी, मोदक बनावेगी और गाय तथा उसके नवजात बच्चे का पूजन करने दौड़ेगी।

अब एक धुन और बढ़ गयी है-'नीलमणि अवश्य वहीं दौड़ गया होगा। वह सुनता ही नहीं कि नवजात बच्चे को छूने से गाय सींग लगा दे सकती है।'

'आपके कुमार को कोई गाय सींग नहीं हिलाती।' गोपियों में कोई-न-कोई कह देगी-'वे पहुँच जायें तो गायें अपने नवजात बच्चे को भी छोड़ कर उन्हें ही सूँघती और हुंकार करती है।'

मैया इस तथ्य से अनजान नहीं है। वह जानती है कि गायों का उसके गोपाल पर असीम स्नेह है। वह हँस देगी- 'वह नवजात बच्चे को उठाकर खड़ा करने में या दूध पिलाने की शिक्षा देने में लगा होगा। सब उसके मित्र वहीं होंगे। गाय को मोदक खिलाकर प्रसन्न होगा वह।'

'वह यहाँ नहीं आया?' मैया व्यायी गाय के समीप पहुँचकर एक बार ठिठककर खड़ी रह जाती है। लेकिन इसकी सहज श्रद्धा इसे निष्क्रिय नहीं रहने देती। मन बहाना बनाता है- 'वह दूसरे किसी के गोष्ठ में, दूसरी किसी गाय के समीप गया होगा। उसे कोई एक गाय नवजात बच्चे के साथ मिल जाये तो अपना स्नान-भोजन भी भूल जाता है।'

मैया को उस गाय का नवजात बच्चे के साथ पूजन करना है। उसे कुछ खिलाना है। इसे तो आज जनी सभी गायों का सत्कार करना है। सेवकों से कह देगी- 'नीलमणि कहाँ है, यह देख आओ।'

मैया की वेदना विस्मृत रहती है। इसमें उत्साह दिखता है, प्रसन्नता दिखती है इस अवसर पर किन्तु सदा ऐसा नहीं होता। अमुक गाय बच्चा देने वाली है, सुनते ही ढूँढ़ेगी- 'महर कहाँ है?'

'महर! सुना है कि द्विमुखी* गौ का दान बहुत पुण्य-प्रद होता है।' मैया तो चाहती है कि अपने गोष्ठ की सब गायें बच्चा देते समय दान ही कर दी जायें। 'नीलमणि के द्वारा इस गौ का दान करा दीजिये।'

'महर! तुम्हारा नीलमणि यहाँ होता तो मैं स्वयं यही सोचता।' ब्रजेश्वर मस्तक पर हाथ रख लेते हैं। सिर झुकाकर अश्रु टपकाने लगते हैं।

'वह नहीं है?' मैया का शरीर पल भर में रक्तहीन हो उठता है। बाबा सम्हाल न लें तो यह कटे वृक्ष की भाँति गिर पड़े।

'वह आवेगा।' बाबा के समीप यही तो अपाधार है जीवन का 'अपने समीप गायों का कहाँ अभाव है। उसके हाथ से तुम जितनी कहोगी, उतनी गायों का दान करा दूँगा-द्विमुखी गायों का दान।'

---

* जब बच्चा उत्पन्न हो रहा हो, केवल मुख बाहर आया हो, उसी समय गौदान किया जाय तो वह द्विमुखी गौ का दान कहा जाता है।

'महर! तुम्हीं इस द्विमुखी गाय का दान कर दो।' मैया कातर कण्ठ कहती हैं- 'अब किसके लिए गोदोहन करोगे? किसके लिए मैं दूध गरम करूँगी? किसके लिए दही जमाऊँगी? किसके लिए दधि-मन्थन करके नवनीत निकालूँगी? हमें अब गाय का करना भी क्या है?'

'महर! मैंने पहिले जन्मों में बहुत पाप किये होंगे। नीलमणि जैसा पुत्र गोद में आया और फिर भी मैं वन्धया ही रह गयी!' मैया ब्रजेश्वर चरण पकड़ लेती है-'तुम्हारे इन चरणों की किंकरी हूँ। तुम द्विमुखी गौ का दान करोगे तो इस अधमा के भी कुछ पाप नष्ट होंगे। मेरा नीलमणि सुखी रहेगा।'

'नीलमणि सुखी रहेगा।' इससे बड़ी अभिलाषा तो ब्रज में कोई किसी की नहीं है। सब गोप अपनी सब गायों का जब वे बच्चा देने लगती हैं, दान कर देना चाहते हैं। बाबा भला इसमें कार्पण्य कर सकते हैं? किन्तु कठिनाई यह है कि महर्षि शाण्डिल्य तथा दूसरे भी ब्राह्मण इन दिनों गोदान लेने को ही प्रस्तुत नहीं है। उनका भी हठ है-'हम गौदान तो अब कृष्णचन्द्र के ही करों से लेंगे।'

'आपके कुमार आकर इस गौ का दूध पियेंगे।' महर्षि के समीप भी ब्रजेश्वरी को समझाने का यही एक उपाय है-'वे इस पद्मगन्धा का दधि-नवनीत आरोगेंगे।'

वर्षगाँठ

वर्षगाँठ आती है, प्रतिवर्ष ही आती है और सभी बालकों की आती है। मैया को ही सबकी वर्षगाँठ स्मरण है। प्रात: बड़े उत्साह से उठती है-'आज नीलमणि की वर्षगाँठ है।'

बहुत शीघ्र यह उत्साह समाप्त हो जाता है, क्योंकि मैया श्रीब्रजेश्वर के समीप ही तो सन्देश भेजेगी बड़े अँधेरे-'आज नीलमणि को वन में मत जाने देना। महर्षि शाण्डिल्य को बुलवा लो।

'महर! उसकी वर्षगाँठ मनाने का सौभाग्य दैव देगा, तब हम मनावेंगे।' बाबा सीधे भवन में आ जायेंगे-'यह सौभाग्य अभी तो भाई वसुदेवजी को प्राप्त है।'

'बाबा जानते हैं कि आज बड़ा धक्का लगेगा ब्रजेश्वरी को, किन्तु उपाय क्या है? वे स्वयं इसीलिए आते हैं कि उनकी उपस्थिति से आघात कुछ तो सम्हल सकेगा।

'महर! तुम आज भी मथुरा नहीं जाओगे?' मैया एकटक मुख देखती कहती है–'उसे वर्षगाँठ पर तो मेरे उपहार दे आओ।'

'महर! मैं जा सकता तो प्रतिदिन उसे देखने जाता। बाबा अत्यन्त व्यथित स्वर में कहते हैं–'अभी जरासन्ध को लौटे हुए कितने दिन? मथुरा अगम्य हो गई और वह बहुत व्यस्त होगा। मेरे जाने से उसे बहुत संकोच होगा। उसने कहा है कि वह स्वयं आवेगा।'

'अच्छा महर!' कटे वृक्ष के समान मैया हताश गिर पड़ती है। आज इसे आश्वासन देना बहुत कठिन है। दीर्घश्वास लेती है–'वह आज नहीं आवेगा। आज देवकी उसे कैसे आने दे सकती है।'

कितने उत्साह से मैया ने अपने उपहार सजाये थे। इसे स्मरण ही नहीं रहता कि इसका नीलमणि अब झंगुलिया पहिनने योग्य नहीं रहा। यह तो शिशु के वस्त्र, आभरण, चौतनिया टोपी बनाती रही है बड़े यत्न से।

'आपके कुमार अब इतने छोटे नहीं हैं।' सेविकाएँ कभी-कभी कह देती हैं। मैया चौंकती है। पटुका तथा धोती सजाने लगती है, किन्तु फिर भूल जाती है।

वर्षगाँठ अकेले श्याम की ही तो नहीं आती। दाऊ की वर्षगाँठ का उतसाह मैया में अधिक भ्रम उत्पन्न नहीं करता। शीघ्र ही उदास हो जायेगी–'रोहिणी जीजी तो मथुरा हैं।'

माता रोहिणी की स्मृति के साथ यह भी स्मरण आता ही है कि दाऊ अपने अनुज के साथ मथुरा हैं। श्याम ब्रज में नहीं हैं, यह स्मृति मैया को जैसे प्राणहीन कर देती है।

वर्षगाँठ भद्र की, तोक की, ऋषभ या विशाल आदि किसी की भी हो सकती है। सब बालक तो मैया के अपने ही हैं। जेठानियाँ हों, देवरानियाँ हों या कोई दूसरी गोपी हो, मैया को लगता है कि सभी बहुत भुलक्कड़ हैं। ये

अपने बालकों का जन्मदिन तक स्मरण नहीं रखपाती हैं।

'कल विशाल का जन्मदिन है।' मैया एक दिन पहिले मध्याह्न में बुलवायेगी और बड़े उत्साह से कहेगी कल उसे गोचारण करने मत जाने देना।'

'आपके कुमार जब यहाँ नहीं है, जन्मदिन का स्मरण उसे केवल रुला सकता है।' विशाल हो या बरुथप, भद्र हो या देवप्रस्थ, सभी की माता को एक ही बात कहनी है-'ब्रज में अब कहाँ किसी की वर्षगाँठ पड़ती है। बालक को स्मरण नहीं रहेगा तो वह गोचारण में अपने सखा का वियोग भूला तो रहेगा।'

प्रत्येक सखा के जन्मदिन पर श्यामसुन्दर उसे उपहार देता था। भुजा फैलाकर हृदय से लगाता था। अब वह नहीं रहा तो जन्मदिन के अवसर पर बालक को उसके वियोग की स्मृति दिलाकर व्यथित ही तो करना है। ब्रज में वर्षगाँठ मनाने का पर्व तो कृष्णचन्द्र के साथ ही विदा हो गया।

मैया ने वस्त्र, आभरण आदि अनेक वस्तुएँ पहिले से सजा रखी हैं, किन्तु अब यह उनकी चर्चा भी कैसे करें? बालक की माता के चले जाने पर उस सामग्री को देखेगी। एक-एक को हाथ में लेगी और रुदन करेगी। 'नीलमणि नहीं है। अब कोई इस अभागिनी के करों का उपहार नहीं लेगा। पुत्रहीना के उपहार भी अभिशाप बन जाते हैं। मैं किसी बालक को कुछ देने योग्य भी नहीं रही।'

'मैं दूसरे का अंकधन लेकर इतरा रही थी। वह तो देवकी का है।' मैया फूट-फूटकर रोती है-'गोपियाँ शील के कारण ही मुँह पर नहीं कहतीं, किन्तु कोई अपने पुत्र को मुझ बन्ध्या के करों का उपहार कैसे देगी? बड़ी कठिनाई होती है सेविकाओं को मैया को सम्भलने में ऐसे समय।

गोवर्धन-पूजन

वैदिक इन्द्रयाग को सत्यसंकल्प श्रीकृष्णचन्द्र ने गोवर्धन-पूजन में परिवर्तित कर दिया। यह परिवर्तन तो हो गया। देवराज का समस्त आक्रोश, सब गर्व उस गिरिधारी के सम्मुख गलित हो गया। अब सुरपति स्वप्न में भी ब्रज में किसी से पूजा पाने की आशा नहीं कर सकते।

ब्रज में गोवर्धन-पूजन का विधान स्वयं उस घनश्याम ने किया था। अत: गोप प्रतिवर्ष गिरिराज गोवर्धन का पूजन करते हैं। कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को यह पूजन, परिक्रमा तो होती ही है।

'नीलमणि कल आवेगा।' मैया उत्साह में पूरी रात स्वयं नाना प्रकार के पकवान बनाती रहती है-'कल उसके देवता का पूजन है। इस पूजन के लिए तो आवेगा ही।'

ब्रज में सभी को यही आशा है। श्यामसुन्दर ने ही तो कहा था कि गिरिराज गोवर्धन ब्रज के देवता हैं। ऐसे देवता जिन्होंने प्रत्यक्ष होकर भोग लगाया। जिन्होंने प्रलय-वर्षा से ब्रज को बचाया और जो बहुत विशाल होने पर चतुर्भुज होने पर भी कृष्णचन्द्र की दूसरी मूर्ति ही लगते हैं। कल उनका पूजन है तो उसमें सम्मिलित होने कृष्णचन्द्र को दाऊ के साथ आना ही चाहिये।

ब्रज में दीपमालिका जलती है, किन्तु उत्साह गोवर्धन-पूजन में आता है। ब्रज की लक्ष्मी तो गायें हैं और उनका पूजन, गोवर्धन-पूजन के साथ होता है। दीपमालिका केवल गोवर्धन-पूजन के लिए सामग्री जुटाने, बनाने का साधन ब्रज में बनती है।

छकड़े जुड़ते हैं, गोपियाँ श्रृंगार करती हैं, गायों का ब्राह्मणों का और गिरिराज का भी पूजन होता है, यज्ञ होता है-होता सब है, किन्तु एक आतुर प्रतीक्षा के साथ होता है। बार-बार सब की दृष्टि मथुरा के पथ की ओर जाती है। मैया बार-बार पूछती है-'कोई रथ आ रहा है?'

'नीलमणि आ जाता तो गिरिराज प्रत्यक्ष होकर नैवेद्य स्वीकार कर लेते।' मैया एकटक देखती रहती है गोवर्धन की ओर-'इनको भी उसके करों का नैवेद्य ही प्रिय है।'

'आप नैवेद्य चढ़ावें तो गिरिराज प्रकट हो जायेंगे।' गोपियों के अनुरोध में सत्य नहीं है, यह कहने का साहस किसी में है? लेकिन मैया उठाने का साहस ही अपने में नहीं कर पाती।

'इन करों से कुछ मुख में लेने नीलमणि ही नहीं आया।' मैया अपने

हाथों की ओर देखती है-'कोई देवता इस हतभागिनी के भाग्य दग्ध करों से अर्पित पदार्थ कैसे लेगा।'

मैया का रुदन, व्याकुलता बढ़ती जाती है। उसे लगता है कि गिरिराज गोवर्धन के शिखर पर विशाल देह गिरिराज तो प्रकट नहीं हुए, किन्तु उसका नन्हा नीलमणि आ बैठा है। मैया दौड़ती है-'आ गया-मेरा नीलमणि आ गया।'

वह मूर्ति अदृश्य होती है तो मैया मूर्छित होकर गिरती है। चेतन होते ही ढेरों पदार्थ एक साथ उठाती है अर्पण करने के लिए।

गोपों ने, गोपियों ने, बालक-बालिकाओं ने भी अब एक नवीन नियम बना लिया है। कृष्णचन्द्र ने गोवर्धन-पूजन कराया था, तब सबने पूजन के पश्चात् प्रसाद-भोजन किया था। खा-पीकर गोपियाँ, बालक, बालिकाएँ छकड़ों पर बैठकर परिक्रमा करने निकली थीं। लेकिन अब सब पैदल, नंगे पैर परिक्रमा करते हैं। सबको आशा रहती है कि कदाचित सायंकाल तक श्यामसुन्दर आ जायें। कोई पहिले प्रसाद ग्रहण नहीं करना चाहता।

कल सायंकाल से उपोषित, सात कोस की परिक्रमा से श्रान्त लोग लौटते हैं, किन्तु किसी में प्रसाद-ग्रहण का उत्साह नहीं। प्रसाद का सम्मान करना चाहिए, इसलिए मुख में कुछ डालना है।

'नीलमणि प्रसन्न रहे!' मैया अञ्चल फैलाकर माँगती है गिरिराज से। 'वे सुखी रहें।' गोपों को, गोपियों को, सबको माँगना तो यही है। सब हाथ फैलाकर कातर स्वर से एकमात्र यही याचना करते हैं।

'अब यदि इन्द्र रुष्ट हो जायें? अब यदि फिर वैसी ही वर्षा होने लगे?' एक ने बहुत सामान्य ढंग से ही यह बात लौटते समय उठायी। 'इन्द्र कल रूठता हो तो अभी रूठ जाये।' मैया ने सुना और उसका सतेज स्वर सुनायी पड़ा-'अब मैं अपने लाल को पर्वत नहीं उठाने दूँगी।'

'वे मथुरा में हैं, सुरक्षित हैं।' किसी गोपी ने कहा-'अब ब्रज में किसे चिन्ता है वर्षा में डूबने-बहने की। इन्द्र वर्षा करता क्यों नहीं? अब उसे डर किसका है? अब कहाँ हमारा गिरिधारी यहाँ गिरधरन करने बैठा है।'

'इन्द्र वर्षा करे या वज्र मारे, ब्रज में अब कोई उसकी पूजा-प्रार्थना नहीं करेगा।' गोपों के स्वर में रोष है। जो गायों को वर्षा करके नष्ट करना चाहता था, ब्रज में उसके प्रति श्रद्धा-सम्मान कैसे रह सकता है।'

'सुखी रहे हमारा गोविन्द !' सबका एक स्वर, किन्तु मैया निढाल हो रही है छकड़े में-'नीलमणि आज भी नहीं आया।'

शिवरात्रि

बिना हिचक प्रतिवर्ष गोप शिवरात्रि पर अम्बिका वन की यात्रा करते हैं। मैया इस यात्रा के आरम्भ में आर्त हो उठती है-'महर! यदि फिर कोई अजगर कहीं से वहाँ आ गया तो ?'

इस यात्रा में बाबा को अजगर ही निगलने लगा था। लगभग कटि तक निगल चुका था। गोपों के उल्मुक-प्रहार का कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ा था। कन्हाई ने आकर एक लात लगायी, तब वह अजगर से गन्धर्व बनकर आकाश में उड़ गया था। मैया को ऐसा लगता है, जैसे आज की ही घटना हो।

'अजगर बहुत हठी होते हैं। वे उल्मुकों से पीटे जाने पर भी मानते नहीं।' मैया का मन धुकधुक कर रहा है-'अब नीलमणि कहाँ है जो अजगर को लात मारकर गन्धर्व बना देगा।'

'महर! वह था तभी अजगर भी आया था।' बाबा भरे नेत्र कहते हैं-'उससे वियुक्त नन्द को निगलने आवे, ऐसा कोई अजगर भी कहीं नहीं है।'

'काश कहीं होता और इस बार मुझे आकर निगल लेता!' मैया मनौती करने जैसे स्वर में बोलने लगती है। 'लेकिन जानती हूँ, कोई नहीं आवेगा। मुझे निगल कर कौन सा उसका उद्धार होना है। मुझ पुत्रहीना को निगलकर तो उसके उदर में ज्वाला ही जागेगी।'

'नीलमणि कितने उत्साह से ब्रत करता था।' मैया के लिए निर्जल ब्रत स्वाभाविक हो गया है। ब्रज में सभी निर्जल ब्रत करते हैं इस दिन और सब अम्बिका वन जाते हैं, किन्तु अब गोपकुमारों में पाँच या एकादश दल के बिल्वपत्र ढूँढ़ने, पाने का उत्साह नहीं है।'

सरस्वती-स्नान, रात्रि-जागरण, चारों पहर की सविधि पूजा सब बड़ी श्रद्धा से, पूरी सावधानी से करते हैं। भगवान शिव के लिंग-विग्रह की तथा देवी अम्बिका की पूजा में कोई शिथिलता नहीं। उलटे श्रद्धा, एकाग्रता बढ़ी ही है। महर्षि शाण्डिल्य मुनिगणों के साथ आते हैं। रुद्रार्चन होता है प्रभात से दूसरे प्रभात तक।

एक ही अन्तर आया है, अब गोप-बालक भी रात्रि के चतुर्थ प्रहर का पूजन होने पर अरुणोदय तक कीर्तन करते हैं। कोई भी पलकें नहीं झपकता। पलकें झपकती ही नहीं, यंह कहना अधिक उपयुक्त है।

'नीलमणि सुखी रहे। वह स्वस्थ रहे।' मैया अञ्चल फैलाकर प्रत्येक प्रहरान्त पूजा के पश्चात् याचना करती है।' 'श्यामसुन्दर प्रसन्न रहें।' गोपियों को भी यही एकमात्र वरदान चाहिए।'

'कृष्णचन्द्र सुखी रहें। यशस्वी हों।' गोपों के अन्तर की महत्तम कामना यही है।' 'कन्हाई भरपूर सुख पावे।' गोपकुमारों का हृदय पुकारता है।'

'श्याम सुखी रहे।' ब्रज के पशु-पक्षी, तरु-लताक बोल सकें तो यही माँगेंगे। भले ये विरह दावानल में स्वयं रात-दिन दग्ध हो रहे हों, किन्तु इनका अणु-अणु पुकारता है-'उस मयूर मुकुटी तक तृप्त वायु न पहुँचे।'

'मृत्युञ्जय! धूर्जटि! विश्वनाथ!' मैया बार-बार प्रार्थना करती है- 'आप आशुतोष हो। मैं दु:खिया, भाग्यहीना हूँ। नीलमणि ही मेरा सर्वस्व है। उसकी रक्षा करते रहो शूलपाणि।'

माँ अम्बिके! गणेश-जननी! आप मुझ वत्स-विरहिता की व्यथा समझ सकती हो। वात्सल्यमयी! मेरे नीलमणि के मस्तक पर अपने अभय करों की छाया रखना।' मैया कण्ठ सूत्र, सिन्दूर आभरण चढ़ाती रहती है और प्रार्थना करती रहती है।'

'मंगलमूर्ति गणनाथ।' मैया सबसे एक ही बात कहती है-'विघ्नेश्वर! आप अपने सब भूत-प्रेत, योगिनी-डाकिनी, रोग-शोक भले मेरे पास भेज दो, किन्तु मेरे नीलमणि से इन सबको दूर रखना।'

'तेरे नीलमणि के स्मरण करने वाले की छाया से मेरे सब गण दूर भागते

हैं।' कह सकते तो भगवान गणपति कहकर प्रसन्न होते-'मैया! गणेश स्वयं तेरे आशीर्वाद का आकांक्षी है।'

देवी अम्बिका, भगवान गंगाधर सब मर्यादा के कारण अप्रकट रहते हैं, मौन रहते हैं-मैया की प्रार्थना संकोच पूर्वक सुनकर सिर ही तो झुका सकते हैं। प्रकट भी हो जायें तो ये वात्सल्यमयी ब्रजेश्वरी कुछ सुनेंगी?

'मेरा नीलमणि सुखी रहे।' मैया के प्राणों में एक ही पुकार बसी है। यह कहाँ कोई छोटा-बड़ा देखती है। यह तो ग्रामदेव, ग्राम-कालिका से, वृक्ष-लताओं से, काक मयूर से भी यही प्रार्थना करने लगती है।

होलिका

'बलिहारी बलिहार।

प्रहलाद-पालन हार।।'

गोप-कुमारों ने अब अपनी यह कीर्तन-ध्वनि कुछ बड़ी बना ली है-

'नरहरि नन्दलाल।'

'जय-जय गिरिधारी गोपाल।'

'अरे! इतनी धूम तुम सब क्यों करते हो?' जिनका अन्तर वियोग-दग्ध हो रहा है, उन्हें कोलाहल तथा बालकों की उछल-कूद कहाँ सुहाती है। गोपी या गोपों में से बहुत-से खीझते हैं।

गोप-बालक भी विचित्र हैं। कभी तो इतने हताश, सुस्त हो जाते हैं जैसे इनमें जीवन ही न रह गया हो और कभी पूरा आकाश मानो सिर पर उठा लेंगे। इनके कोलाहल की, धूम की सीमा नहीं रहती। ऐसे समय ये किसी की नहीं सुना करते।

'प्रहलाद को जलाने वाली राक्षसी होलिका बार-बार जी जाती है। अभी पिछले वर्ष ही तो हमने उसे जलाया था।' बालकों को समय का ध्यान कहाँ रहता है-'वह इस वर्ष यदि फिर जी गयी तो हम अबकी दारी को दुगुनी लकड़ियों में फूँकेंगे।'

'नीलमणि कहाँ है?' मैया द्वार पर आती है दौड़कर और बालकों से

पूछती है। बालक इतने उत्साह में है, ऐसे गाते-बजाते कूद रहे हैं तो श्याम सुन्दर को इनके साथ ही होना चाहिए। वह साथ न हो तो गोप-बालकों में उत्साह आ नहीं सकता।'

'मैया! तू उसे जगा मत। वह गोचारण से थका लौटा है।' बालक मैया की बात सुने बिना अपनी ही कहते हैं-'राक्षसी होलिका को हम सब जला देंगे। बहुत सारी लकड़ियाँ हमने एकत्र की हैं।'

'लेकिन नीलमणि है कहाँ?' मैया की पुकार सुनने को बालक अपनी धुन में गाते, कूदते दूर चले जाते हैं। मैया द्वार पर ठगी-सी खड़ी एकटक देखती रहती है उन सबकी ओर।

'नीलमणि किसी दूसरी टोली के साथ तो नहीं है?' मैया को कैसे विश्वास हो कि श्याम को देखे बिना गोप कुमारों में यह उत्साह आया है।'

लेकिन गोप-कुमारों का उत्साह भी कहाँ टिका रहने वाला है। प्रात:काल जब कन्हाई नहीं मिलता, सब एक साथ नन्दभवन पहुँचते हैं अपने सखा को पुकारते और वहाँ भ्रम-भंग होता है-'वह तो ब्रज में ही नहीं है।

ब्रज की होली, परस्पर भस्म, धूलि, गोबर उछालने, मलने की उद्दाम क्रीड़ा और फिर रंगभरी झोलियाँ लिए बरसाने की यात्रा-अब तो यह सब स्वप्न हो गया। रसराज ही ब्रज में नहीं रहा तो रंग-क्रीड़ा में रस रह सकता है?

नन्द-ब्रज और बरसाना-आज सर्वत्र मानो विषाद का साम्राज्य छा जाता है। लड़के, लड़कियाँ सब मुख छिपाते एकान्त कोना ढूँढ़ते हैं और रुदन करते रहते हैं।

मैया को तो प्रत्येक बालक अपना नीलमणि ही लगता है। वह एक-एक को पूछती है। एक-एक को बुलाने सेवक भेजती है 'भद्र भी नहीं है। वरुथप कहाँ है? कहाँ है तोक और तेजस्वी?'

'मेरे लाल! आज के दिन रोते नहीं। उपवास नहीं करते।' मैया अञ्चल से मुख पोंछती है। कुछ मधुर पदार्थ मुख में देती है-'तेरा सखा आवेगा और तुझे दु:खी देखेगा तो उदास हो जायेगा।'

आज तो बरसाने के बालकों को भी बुलाना है बालिकाएँ भी मैया की

पद-वन्दना करने आती हैं। कीर्ति कुमारी की पद-वन्दना भी उनकी कोई अन्तरंगा सहेली कहेगी ही। मैया मूर्ति की भाँति ठिठक जायेगी-'आज वह होता।'

लेकिन आज मैया को रुदन करने का भी अवकाश नहीं है। आज ये बालिकाएँ सब लोक-लाज त्यागकर स्वयं उसकी पदवन्दना करने आयीं हैं। श्यामसुन्दर होता तो ये ऐसे स्वयं चलकर आती इस घर में? इन्हें वह ले आता।

मैया एक-एक को अंक में लेती है। अपने करों से वेणी गूँथती है। आभरण सजाती है। मुख पोंछती है आँचल से। वृषभानुनन्दिनी के लिए क्या भेजे? क्या दें? मैया निर्णय नहीं कर पाती। जो उठाती है, कुछ सोचकर छोड़ देती है-'इस घर का कोई उपहार उसे अब सुखी करेगा? उपहार से उसकी व्यथा बढ़ेगी नहीं?'

'उसे मेरा लाख-लाख आशीर्वाद।' मैया चाहकर, प्रयत्न करके भी अपने को रोक नहीं पाती-'मैं भाग्यहीना उस जैसी लक्ष्मी को गोद में बैठाने योग्य नहीं हूँ। विधाता ने मुझे इस सौभाग्य के योग्य नहीं माना।'

होली का रंगभरा पर्व, किन्तु ब्रज में तो यह विषाद का विषम दिवस बन गया है। केवल मैया दूसरे दिनों की अपेक्षा इस दिन कुछ अधिक सचेत रहती है। अत्यन्त कातर बालकों, बालिकाओं को इसी का वात्सल्य आज स्नेह दान करता है।

वंशी

वंशी ब्रज में वर्जित वाद्य बन गयी है। अनेक बालक और गोप भी वंशी बजाते थे। भले वे बेसुरा ही बजाते थे, किन्तु बजाते थे। इसलिए बजाते थे कि ब्रजेन्द्र-नन्दन उससे वेणुवादन को उत्साहित होते थे। कभी सिखलाने के लिए, कभी सुनाने के लिए, कभी अपनी मौज में वे वंशी बजाते थे। वंशी बजती ही रहती थी। वे गये और वंशी मूक हो गयी। वंशी तो ब्रज में ही बज सकती थी। वे भले गये, किन्तु वंशी मथुरा नहीं गयी।

वंशीधर तो श्रीकृष्णचन्द्र ही हैं। वंशी कोई बजा ले, किन्तु वंशी किसी दूसरे का वाद्य तो नहीं बनती। चेतन को जड़ और जड़ को चेतन बना देने की क्षमता, सचराचर सृष्टि को विमुग्ध बना देने की शक्ति जिस वंशी में है, वह ब्रज से बाहर तो जाया नहीं करती।

'वह इसे रात्रि में भी लेकर ही सोता था।' मैया अपने लाल की वंशी को प्राणों के समान रखती है। उसे जब देखती है-'नीलमणि एक क्षण को इसके बिना नहीं रहता था। कभी कर में, कभी कटि-काछनी में लगाये रहता था।'

कोई दूसरा वंशी को स्पर्श करे, यह मैया को सहन नहीं है। श्रीब्रजराज तक को वह वंशी छूने नहीं देती-'महर! इसमें क्या विशेषता है, नीलमणि ही जानता है। वह आते ही अपनी वंशी पूछेगा।'

मैया अपने आँचल से दिन में कई-कई बार वंशी को पोंछती है। ऐसे कोमल ढ़ंग से पोंछती है, जैसे कन्हाई का मुख ही पोंछ रही हो। इसे देर तक उलट-पलट कर देखती रहती है। हृदय से लगाये रहती है। 'कहता था कि गोपियाँ इसे चुरा लेंगी। कोई तो इसे चुराने नहीं आयी। मैं इसे किसी को चुराने नहीं दूँगी।'

मैया को भी अपने पुत्र का रोग लग गया है। यहभी वंशी को छाती से लगाकर ही सोती है। कुछ समय को कहीं रखती भी है तो घूम-फिरकर बार-बार देखने पहुँचती है। दूसरे किसी के सम्मुख इसे निकालते मैया का हृदय काँपता है। यह वंशी तो इसकी विधि हो गयी है।

कन्हाई किसी के भी अधर से अपनी वंशी लगाकर हठ करता था-'तू बजा।' जाने कितनी बार मैया से ही मनुहार करता, मचलता था-'तू बजा।' श्याम के हठ पर फूँक मारकर इस वंशी से पता नहीं कितनों ने छोटी-बड़ी सीटी जैसे ध्वनि निकाली है, किन्तु वंशी बजती तो उस वंशीधर से ही थी।

कदम्ब या तमाल के नीचे ललित त्रिभंग से भुवन मोहन खड़ा है। झुक आया है मयूरपिच्छ, कर्ण-कुण्डल भुजा का स्पर्श करने लगता है। पतले, नन्हें सुकुमार अधर संकुचित हो गये हैं, बड़े-बड़े दृग अर्धोन्मीलित हो रहे हैं,

किसलय-कोमल अंगुलियाँ वंशी के छिद्रों पर जम गयी हैं। ब्रजपति के मूर्तिमान सौभाग्य की जिसने भी यह झलक पायी, धन्य हो गया।

मैया ने तो अपने आँगन में ही उसे वंशी बजाते देख है। वह वंशी बजाता था तो गोपियाँ, ग्वाल ही नहीं, गायें तक भागकर आँगन में आ जाती थीं। कपियों, पक्षियों से भवन के छज्जे झूम उठते थे।

मैया वंशी हाथ में लेती है तो अब भी लगता है कि उसका लाल आकर बड़े दुलार-भरे स्वर में कहेगा-'मैं बजाऊँ?'

कृष्ण वंशी से तन्मय हो जाता था। वह बेमन से तो वंशी में आधी फूँक भी नहीं मारता था। वंशी श्याम की साधना थी। वंशी श्याम की सहचरी थी। वंशी श्याम की सरसता की मूर्ति थी। वही वंशी अब नीरव पड़ी है।

'तू फिर बोलेगी। वह आवेगा और तुझे अधरों पर रखकर फिर मुखरित करेगा।' मैया वंशी से ऐसे बातें करती है, जैसे वंशी इसकी बातों का उत्तर देगी-'तू भी मेरे समान उसके स्पर्श से वञ्चित हो रही है। लेकिन तू उदास श्रीहीन मत बन। तू खिन्न दीखेगी तो वह दु:खी होगा।'

'वह अपनी वंशी भूल गया।' मैया अनेक बार चौंकती है-'वंशी के बिना कैसे रहता होगा?'

'वंशी ही नहीं है तो उसे ब्रज स्मरण आवेगा?' मैया के मन में पता नहीं कितनी बातें उठती हैं-'उसके पास तुझे भेज दूँ?' बड़ा कठिन है यह काम। मैया किसके द्वारा वंशी अपने नीलमणि के समीप भेजे? दूसरे किसी को वंशी छूने देना ही इसका हृदय स्वीकार नहीं करता है।

मयूरपिच्छ

वर्ह-पिच्छ बहुत सुलभ हो गये हैं ब्रज में। पता नहीं मयूर को क्या हो गया है। ये वन में रहना ही नहीं चाहते। दिन में भी बार-बार भाग आते हैं। रात्रि में भी वृक्षों के बदले भवनों के ऊपर ही विश्राम करते हैं। सम्भवत: ये उस घनश्याम को देखने की आशा में ही नन्दग्राम में इधर से उधर घूमते फिरते हैं।

पहिले यही मयूर थे। पंख फैलाये कन्हाई के आस पास नाचते ही रहते थे। सब महीने इनके लिए पावस थे, क्योंकि घनसुन्दर इनके सम्मुख था। तब ये हर्ष में फूले फिरते थे। इनके पंख तब इतने दृढ़ थे कि कदाचित ही कोई पंख ये गिराते थे और अब तो ब्रज में पतझड़ पैर तोड़कर बैठा है। ये मयूर जहाँ रात्रि में बैठते हैं, प्रात: वहीं सब पंख झाड़ देते हैं। अब इनके पूरे पंख ही देखने में नहीं आते। जब पंख उठाकर नृत्य करने का उत्साह ही बिदा हो गया, पंखों का व्यर्थ भार ये भला क्यों उठाये फिरें ?

'इन्हें श्यामसुन्दर मस्तक पर धारण करते हैं।' बालिकाओं को सह्य नहीं है कि कोई मयूरपिच्छ से व्यजन बनावे। वे इन पंखों को समेट-समेटकर धरती जाती है, परम निधि के समान। प्रात: काल लड़कियाँ उठते ही इन पिच्छों को समेटने भागती हैं। जैसे इनसे मयूरपिच्छ माँगने वह वनमाली आने ही वाला हो।

'तू इन्हें अपने केशों में लगायेगा ?' इतना निष्ठुर प्रश्न ब्रज में किसी बालक से कोई करने का साहस नहीं करता।

यही बालक हैं जो मयूरपिच्छों के लिए वन में भटकते फिरते थे। सब अपने केशों में पंख सजाते थे। यह तो अपनी अपनी रुचि कि कोई हंसपिच्छ और कोई शुकपिच्छ प्रिय थे, किन्तु कन्हाई के केशों में अपने कर से मयूरपिच्छ लगाने का उत्साह किस हृदय में नहीं होता। अब तो इनके केशों में पल्लव, सुमन, कुछ नहीं दीखता। कोई पिच्छ पाता भी है तो उसे लेकर हिचकियाँ भरकर रोता है।

मयूर पहिले भी नन्दभवन पर ही अधिक बैठते थे। अब तो कोई भूला-भटका ही रात्रि में दूसरे किसी भवन पर बैठता है। जो भटककर अन्यत्र बैठ जाये, लड़कियों को उसी के पिच्छ मिल सकते हैं। अत: उन सबको दौड़ना, भटकना बहुत पड़ता है। वर्ह-पिच्छ कभी-कभी ही प्राप्त होता है। नन्दभवन तो सबेरे-सबेरे कैसे जा सकती हैं।

'मैं इनका क्या करूँ ? किसके केश सजाऊँ इनके द्वारा ?' मैया सबेरे ही मस्तक पर हाथ धरकर बैठ जाये और रुदन करने लगे, यह कोई दासी

नहीं चाहती। दासियाँ अँधेरे ही उठकर पहिले मयूरपिच्छ ही समेटती हैं। वे प्रयत्न करती हैं कि कोई पंख मैया की दृष्टि में न आये।

दासियाँ खीझती हैं, दु:खी होती हैं। मयूरों को कैसे समझावें कि घनश्याम अब इस सदन में नहीं हैं। ये अन्तत: अबोध पक्षी ही हैं। सबेरे सबके सब आँगन में उतर आते हैं। अपनी केका-ध्वनि में पुकारने लगते हैं। जैसे मयूरमुकुटी को बुलाते हो। मैया इन्हें मुठ्ठी भर-भरकर दाने डाले बिना मानती नहीं। कहती हैं 'ये मेरे नीलमणि के सखा हैं। वह इनके साथ नूपुर की रुनझुन करता नाचता रहता था।'

मयूर हैं कि दाने चुगना इन्हें सुहाता नहीं मैया के ही आसपास घूमते रहेंगे। इसके साथ कक्ष में जायेंगे। अनेक बार मैया के वस्त्र पकड़कर चोंच से खींचेंगे। इनको कोई कैसे समझायें? आँगन में कक्ष में मैया के समीप पंख गिरा देते हैं और फिर मैया के वस्त्र खींचकर मानो संकेत करते हैं-'यह पिच्छ आपके पुत्र के लिए।'

सेविकाएँ तो पंखों को समेटती छिपाती फिरती है। फेंक वे भी नहीं सकतीं। वे भी नहीं जानती कि कक्ष में छिपाकर रखे इतने अधिक पंखों का वे क्या करेंगी, किन्तु उनके ब्रजेन्द्रनन्दन को ये पंख प्रिय है। इन्हें वे मस्तक पर धारण करते हैं। इन्हें फेंका कैसे जा सकता है। वे आवेंगे तो ढेर सारे पंख पाकर प्रसन्न होंगे। आवेंगे ही।

पंख मैया के सामने न पड़ें, यह सावधानी कितनी भी रखो, मयूर मानने वाले नहीं हैं। ये सब भगाने पर भी भागते नहीं हैं। ब्रजेश्वरी इन्हें भगाने भी नहीं देती हैं।

'मैं किसकी अलकों में इसे सजाऊँ?' मैया मयूर पिच्छ हाथ में लेते ही धम्म से बैठ जायेगी। इसके नेत्रों की धारा सूखना ही नहीं जानती। शरीर स्वेद से भीग जायेगा। थरथर काँपती रहेगी, जैसे शीत-ज्वर आगया हो। उस पिच्छ को कभी घूर-घूरकर देखेगी और कभी हृदय से लगावेगी।

'यह तो बहुत श्रीहीन है' कोई दासी समीप आ जायेगी-'यह आपके कुमार की अलकों में लगाने योग्य नहीं है। मैं दूसरा उत्तम पिच्छ ढूँढ़ लाऊँगी।'

दासी चाहती है कि मैया के करों से पिच्छ लेकर कहीं छिपा दे। पिच्छ सचमुच श्रीहीन है। अब इन कृष्ण वियोग-कृश मयूरों के पिच्छों में वह कान्ति रही ही कहाँ है। लेकिन मैया कहती है-'कितने प्यार से पक्षी ने इसे गिराया है।' मैया ही जानती है कि उसके लाल को क्या प्रिय लगता है।

पीतपट

ब्रज में पीतपट पहिनने की बीमारी चल पड़ी है। बालकों ने सब दूसरे रंग त्याग दिये हैं। बालिकाओं को भी अब पीली साड़ियाँ ही पहिननी हैं। बहुत थोड़े गोप हैं, गोपियाँ हैं जो अपने पहिले प्रिय रंग को पहिनते हैं। ब्रजराज अवश्य काषाय वस्त्र धारण करते हैं, किन्तु उनसे भी बड़े अब पीली कछनी बाँधने लगे हैं।

नीलमणि आया।' मैया किसी को भी आती देखती है तो उसे पहिले यही भ्रम होता है। वह स्त्री-पुरुष, बालक-बृद्धभी नहीं देखती। देखती है केवल वस्त्र का रंग।

'आपके कुमार ऐसी श्वेत दाढ़ी वाले हो गए?' सेविकाएँ अनेक बार कह देती हैं, जब कोई बृद्ध गोप दीखता है और मैया वस्त्र पर दृष्टि पड़ते ही दौड़ना चाहती है।

'तू रुग्ण है?' किसी भी बालक को अंक में लेकर मैया बार-बार उसका मुख देखती है-'तेरा मुख पीला-पीला क्यों लगता है?'

'यह तो वस्त्र के कारण ऐसा लगता है।' बालकों को, बालिकाओं को भी यह बहाना मिल गया है। सबके मुख रक्तहीन हो रहे हैं, किन्तु उसे छिपाने का उपाय यह पीत वस्त्र बन गया है।

'तू अब पीताम्बरा हो गयी?' किसी बालिका से मैया कह देती है तो बालिका का मुख लज्जा से सिन्दूरारूण हो उठता है। उसे सूझता ही नहीं कि वह क्या बहाना करे।

'आपके कुमार ऐसा ही वस्त्र पहिनते थे।' केवल बृद्धाएँ यह बात मुख से कहती है-'अब वे कभी दौड़ते आकर अंक में तो बैठते नहीं। उनके वस्त्र का रंग

देह से लिपटा रहता है तो उनके उस अमृतस्पर्श का तनिक भ्रम बना रहता है।'

'उसके स्पर्श का भ्रम!' मैया उसी के वस्त्र करों में लेती है, स्पर्श करती है और अत्यन्त कातर हो उठती है। 'नीलमणि जैसे वस्त्र?' मैया वस्त्र को हाथ में लेकर बार-बार देखती है। उसके लाल को स्वर्णपीत, विद्युदाभ वसन ही प्रिय थे। ब्रज में पीताम्बर दुर्लभ नहीं हैं, किन्तु कोई वस्त्र किसी का वस्त्र अब श्यामसुन्दर के वस्त्र जैसा क्यों नहीं लगता?

'यह उसका पटुका है।' मैया ने बहुत सहेजकर अपने नीलमणि के पटुके, कछनियाँ रखी हैं। अनेक बार वह उनमें से कोई उठा लाती है। लाकर स्वयं चौंकती है- 'यह उसी का है?'

लगता है कि भूल से कोई और वस्त्र उठा लायी। फिर जाती है और लौटकर फिर चौंकती है। ब्रज में लोग ऐसे ही वस्त्र तो पहिनने लगे हैं, किन्तु नीलमणि जैसे वस्त्र? ये वस्त्र उसके वस्त्रों जैसे हैं?

'वस्त्र तो पाये जा सकते है, किन्तु ब्रजेश्वरी! आपके कुमार की अंगकान्ति कोई कहाँ से ले आवे?' उस दिन तपस्विनी पूर्णमासी जी के साथ उनका मधुमंगल आ गया। वह भी अब हंस पक्षोज्वलवस्त्र के स्थान पर पीतपट पहिनने लगा है। मैया उसका पटुका करों में लेकर चौंकने लगी, तब पौर्णमासी जी ने कह दिया।

'तू किसके वस्त्र पहिन आया?' मैया ने अनेक बार अपने लाल को टोका है। 'किसके वस्त्र?' श्यामसुन्दर चौंककर अपनी कछनी या पटुका देखता छूता था-'तूने ही तो इन्हें पहिनाया है।'

'तू क्या लगा आया वस्त्रों में?' मैया कभी चौंककर पूछती थी-'कहाँ गया था तु? झाड़ियों में घूमता फिरा है?' 'नहीं तो।' कृष्णचन्द्र भी चौंकता था। अपने वस्त्र देखता था और तब चन्द्रिका-धवल हास्य आता था उसके अधरों पर-'कहाँ, कुछ भी तो इनमें नहीं लगा है।'

श्यामसुन्दर की अंगकान्ति पड़कर उसके वसन विचित्र हो उठते थे। कहीं हरिदाभा, कहीं पीत हरिदाभा और कहीं पीत छटा। वस्त्र लहराते थे, हिलते थे अथवा उठाये हिलाये जाते थे तो कृष्ण की अंगकान्ति उन पर

लहराती उनकी नवीन-नवीन छटा बनाती रहती थी। अब मैया को अपने लाल के ही पटुके वैसे नहीं लगते, जैसे उसके कन्धे पर लगते थे तो क्या आश्चर्य की बात है।

'नीलमणि जैसे वस्त्र।' मैया के मानस-नेत्रों के सम्मुख वही हरिदाभ पीतपट लहराता है। लहराती है उस पर वही घनश्याम की नील अंगकान्ति। यह तो पीतपट देखते ही कोई और पीताम्बरी देखने लगती है।

'नीलमणि...?' मैया का शरीर स्वेद-निर्झर बनने लगता है। यह रोमाञ्चकण्टकित, झंझा में काँपता कदलीपत्र जैसा श्रीअंग.।

दधि

'विलोड़ने की क्या आवश्यकता है? क्यों तुम सब इतना श्रम करती हो? ऐसे ही दे दो इसे कुत्तों, बिल्लियों और कपियों को।' मैया कभी तो उत्साह में स्वयं दधिमन्थन करती है और कभी सेविकाओं का दधि-मन्थन भी इसे असह्य हो जाता है-'किसके लिए माखन निकालना है? अब कौन नवनीत-भोजी बैठा है यहाँ।'

'आपके कुमार आवेंगे?' सेविकाएँ भी तो इसी आशा पर सबेरे कार्य-व्यस्त होने का उत्साह अपने में पाती हैं।' वह आज आवेगा? किसने तुमसे कहा?' मैया उत्सुक होकर पूछती है-'तुमने कहाँ सुना?'

'वे आवेंगे ही।' सेविका और क्या कह सकती है? ब्रज में सभी तो यही कहते हैं, मानते हैं और इसी आशा पर जीवित हैं।

'वह कितना दधि-माखन खा लेगा।' मैया का कुछ ठीक नहीं है। कभी तो स्वयं पद्यमगन्धा गौ के दुग्ध का दधि मन्थन करने लगेगी-'उसके लिए मैं माखन निकालूँगी। और कभी सेविकाओं को भी मन्थन नहीं करने देगी- 'मेरे गोष्ठ में गायों का अभाव है? वह आवेगा तो दधि माखन कम मिलेगा। बाँट दो। फेक दो। नहीं चाहिए मुझे नवनीत। कृपण मत बनो। जो पशु-पक्षी चाहते हों, सबको दधि खाने दो।'

'इसी दधि के लिए मैंने अपने लाल को बाँध दिया था।' मैया कब

आवेश में भाण्ड उठाकर आँगन में पटक देगी, कोई कहनहीं सकता-'ये अभागे दधि- भाण्ड। नीलमणि ने एक भाण्ड फोड़ दिया तो मेरे सिर भूत चढ़ बैठा था। मैं साटिका लेकर उसके पीछे दौड़ी थी।'

सेविकाएँ स्तब्ध हो जाती है। चुपचाप भवन के भाण्ड छिपाने लगती हैं। ऐसे आवेश के समय ब्रजेश्वरी को सम्हालना बहुत कठिन होता है। वे जो भी भाण्ड पावेंगी, उठाकर पटकती जायेगी। साटिका कोई दीख जाये तो टुकड़े-टुकड़े कर देंगी।

'ये कर! इनसे मैंने अपने नीलमणि पर साटिका उठायी!' मैया का रोष किसी क्षण अपने करों पर उतर सकता है-'मैं इन्हें भस्म बना डालूँगी।'

'मुझे मत रोक!' पकड़ने वाली सेविका हो या गोपी, मैया उसकी सुनना नहीं चाहती- 'ये अधम कर रहने योग्य नहीं है। तू इनका स्पर्श मत कर! इनको छूकर तू भी अपवित्र हो जायेगी।'

दासियाँ दौड़कर श्रीब्रजराज को समाचार देंगी। वही ऐसे आवेश में इस अपनी अर्धांगिनी को सम्हाल पाते हैं।

'महर! तुम यह क्या करने बैठी हो? मेरा या तुम्हारा शरीर अब अपना रहा है?' बाबा व्यथा-भरे स्वर में कहते हैं-'तुम्हारा नीलमणि आवेगा और जब अपनी मैया के करों में व्रण देखेगा, उसके कमल-नेत्रों की धारा रुकेगी? तुम उसको उठाकर अंक में कैसे लोगी? तुम अपने कर से उसके मुख में नवनीत नहीं दोगी तो वह भूखा नहीं रहेगा?'

'मेरे स्वामी! मेरे देवता!' मैया पदों पर सिर रखकर फूट-फूटकर रोयगी। इसे रो लेने दिया जाये, इसके अतिरिक्त इसके उग्र आवेश की शान्ति का कोई अन्य उपाय नहीं है।

'उसने तुम्हारे बहुत भाण्ड फोड़े, बहुत दधि खामा लुटाया। तुम दया करके दधि सहित भाण्ड ले जाओ।' मैया चाहे जिस गोपी के पैर पकड़ लेती है- 'मेरे नीलमणि को ऋण-मुक्त कर दो। मना मत करो। ले जाओ मुझ पर कृपा करके।'

लगता है कि हृदय टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। गोपी मूर्छित होकर गिर

पड़े तो आश्चर्य नहीं। वह चीत्कार करेगी- 'ब्रजेश्वरी! आप इतनी निष्ठुर मत बनो। मेरा वध कर दो, किन्तु यह मत कहो। मत सुनाओ यह सब। हाय कितनी मूर्ख हूँ मैं।'

इतनी कातर चीत्कर कि मैया चौंक पड़ती है। पकड़ें नहीं तो वहीं पटककर सिर फोड़ ले अपना।

'नीलमणि हमारा नहीं है?' जेठानियाँ, देवरानियाँ दूसरी भी अनेक हैं जो क्रोध और रुदन के साथ बोलती हैं- 'हमने कभी तुम्हें उलाहना दिया था? उसे कभी कुछ कहा भी तो अपने को ही तो कहा। तुम कहती हो कि वह हमारे डाटने से, हमारे उलाहनों से ब्रज छोड़कर गया?'

मैया बहुत शीघ्र पैर पकड़कर क्षमा मांगने लगेगी। किसी के लिए इससे निष्ठुर बात क्या होगी कि श्याम के दधि लुटाने चर्चा उससे की जाये। मैया इसे समझती है, किन्तु उन्माद में यह भूल भी तो हो जाती है।

माखन

विपरीत परिस्थिति अत्यन्त प्रिय वस्तु को भी अप्रिय बना देती है। नवनीत जैसी गोप-गोपियों की परम प्रिय वस्तु अब ब्रज में उपेक्षणीय हो गयी है। कोई बालकों को भी नवनीत खिलाना नहीं चाहती। सब जानती है कि बालक नवनीत देखकर रोने लगते हैं।

'ये कपि वासी नवनीत गटकते थे उसके करों से।' गोपियाँ बन्दरों को देखकर अब माखन के लोंदे फेंकती हैं उनकी ओर, किन्तु बन्दर तो ऐसे दूर कूदते हैं जैसे किसी ने पत्थर फेंके हों। सूंघना तो दूर, उलटे दाँत दिखाते हैं। इन्हें भी अब माखन अप्रिय हो गया।

'अब धरे जाओ माखन के मटके या उसे घृत बनाती बैठो।' गोपी मस्तक पर हाथ पटकती बिलखती है- 'बहुत प्रिय था तुम्हें नवनीत। प्राण जैसे लगते थे ये भाण्ड। इनके पीछे तुमने उलाहनाा दे-देकर उस नवधन सुन्दर की नाक में दम कर रखा था। अब वह ऊबकर चला गया। समेटो अपना नवनीत।'

सबकी व्यथा एकसी है। दधि-मन्थन करते, नवनीत निकालते हाथ ही नहीं, हृदय झुलसते हैं। एक वह क्या चला गया, ब्रज का जीवन चला गया। अब ब्रज में-गायों से भरे ब्रज में, गोपों के ब्रज में ही गोरस अखाद्य हो गया। दूध, दही, माखन देखकर लगता है कि हृदय बाहर आ जायेगा।

'इसी नवनीत के पीछे मैंने नीलमणि को बाँध दिया था। मैया छीकों से उतारकर कभी लोंदे फेंकती है, कभी मटके ही पटक देती है-'वह कपियों को नवनीत ही तो बाँट रहा था। यह पुण्य भी उसका मुक्त कृपण से देखा नहीं गया।'

'वह सुकुमार भागता फिरा-भय-विह्वल भागता फिरा और मैं उसे साटी लिये दौड़ाती रही।' मैया के दु:ख की सीमा नहीं है-'वह रुदन कर रहा था। उसके पद्मदल विशाल लोचनों से बड़े-बड़े अश्रु बिन्दु कपोलों को अञ्जन कलुषित करते रहे, किन्तु मुझ पाषाणी को दया नहीं आयी। मैं उस नन्हें से सुकुमार को व्याघ्री के समान गुर्राती रही। फट नहीं गया मेरा वज्र हृदय।'

'बन्दर तक मुझसे डर गये। अब भी मुझे देखते ही दूर भाग जाते हैं। वह कितना डर गया होगा?' मैया का अन्तस्ताप अश्रु तक शुष्क कर देता है-'अब तुझ पिशाची के कर से छुआ माखन कोई कपि कैसे खायेगा। सुना है बन्दरों को विष की गन्ध आती है। तेरे तो स्पर्श में ही क्रूरता, कृपणता, क्रोध की पता नहीं कितनी गन्ध होगी।'

'आप व्यर्थ इतना दु:ख करती है।' गोपियाँ समझाती हैं-'आपके कुमार तो उस दिन भी ऊखल से छूटने पर आपके अंक में दौड़ आये थं। ये बन्दर तो बालकों के मित्र हैं। बालक नहीं खाते, अत: ये भी माखन नहीं खाते। किसी भी घर तो नहीं खाते।'

'वह तो भोला था-बहुत भोला।' मैया सूने नेत्रों से गोपियों की देखती है-'अब क्या उसे वह स्मरण आता होगा? वह वैसा ही भोला है। उसे तो चाहे जितना मैंने दु:ख दिया, उसी प्रहर सब भूल जाता था, किन्तु मैं पिशाचिनी हूँ। अपने ही बालक को दौड़ाने-डाँटने, रुलाने पर उतरी ही रहती थी।'

'अब इस माखन का क्या होगा?' मैया उठने में, हिलने में भी असमर्थ हो जाती है। वह एकटक घूरे जाती है और बड़बड़ाती है–'इसी माखन के लिए मैं कृपण हो गयी थी। अब ब्रज के सब घरों का माखन लाकर मुझे उसी में दबाकर चिता पर चढ़ा दो। जला दो इसी के साथ मुझे। मुझ पापिनी की प्यास मिटा दो। यह माखन लेगी–माखन।'

मैया अनेक बार उन्माद में अट्टहास करने लगती है। गोपियों के प्राण सूखने लगते हैं। सेविकाएँ ब्रजेश्वर को बुलाने दौड़ती हैं।

'वे भुवन मोहन अपनी नन्हीं लाल हथेली फैलाये मचलते थे–माखन दे।' गोपी की वेदना भी मैया से कम नहीं है–'मैंने तनिक-तनिक माखन के लिए उन्हें खिझाया, ललचाया, नचाया। उनके उस नन्हें कर पर सरसों जितना माखन रखते मुझे लज्जा नहीं आती थी। वह गृह उनका नहीं था? वह सब माखन उन्हीं का नहीं था? उन्होंने जो मान दिया था, उससे मतवाली हो गयी थी मैं।'

मैया के सम्मुख कोई यह सब कहने का साहस नहीं कर सकती, किन्तु माखन देखते ही किसी का भी हृदय तो हाथ में नहीं रह जाता। गोपी के घर में से नवनीत को कैसे अदृश्य किया जाये? ब्रजेश्वरी के सम्मुख ही माखन न पड़े, यह व्यवस्था कैसे बने?

रज्जु

बन्धु-बाँधव, बन्धन, ये शब्द एक ही धातु से बनते हैं। जो अपने साथ स्नेह-बन्धन में बाँधे रहे, वह बान्धव या बन्धु, किन्तु बाँधेगा रज्जु में ही भले ही वह स्नेही की रज्जु हो। ब्रज में मैया ने रज्जु बाँधकर गोपाल को दामोदर बना दिया। कितना भी महत्वपूर्ण रहा हो यह बन्धन, इसने कितनी भी महिमा प्रकट की हो मैया के वात्सल्य एवं कृष्ण की स्वजन-वश्यता हो, किन्तु बहुत दु:खद हो गया है यह बन्धन मैया के लिए अब।

कोई रज्जु मैया की दृष्टि में ही न पड़े यह कैसे सम्भव है? गोपराज के गृह से दधि-मन्थन की रज्जु कहाँ हटा दी जायें? सेविकाएँ प्रयत्न करती रहती है

कि मैया की दृष्टि रज्जु पर न पड़े, किन्तु सब समय यह सम्भव नहीं होता।

मैया रज्जु देखते ही उन्मादावेश में आ जाती है। 'कभी वह रज्जु को उठाकर अग्नि में डाल देगी, कभी छुरिका लेकर टुकड़े-टुकड़े करेगी और कभी अपनी भुजा अथवा कर में इतने जोर से लपेटने लगेगी कि सेविकाओं के रोकते-रोकते भी शरीर का वह भाग नीला पड़ जायेगा। कई दिनों तक नीला रहेगा। वह पीड़ा नहीं देता होगा ? लेकिन मैया उस पर किसी सेविका को तैल अथवा नवनीत नहीं लगाने देगी।

'महर! यह तुम क्या कर लेती हो ?' श्री ब्रजराज के नेत्र भर आते हैं। मैया के स्वर्ण गौर सुकुमार कर या भुजा पर रज्जु कसने का वह नीला चिन्ह-भय लगता है कि स्पर्श करने से पीड़ा होगी-'यदि आज ही श्याम आ जाये, कितनी पीड़ा होगी उसे तुम्हारे अंग पर यह चिन्ह देखकर ?'

'मैं उससे इसे छिपाये रहूँगी।' मैया तत्काल उस अंग को वस्त्र में छिपा लेगी। छिपाये ही रहना चाहेगी। अपराधिनी के समान कहेगी-'महर ! तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, उससे मत कहना। मैं फिर ऐसा नहीं करूँगी।'

'वह तुम्हारी भुजा या कर पर वस्त्र लिपटा नहीं देखेगा ?' कोई उत्तर नहीं इसका मैया के समीप। जानती है कि उसका लाल ऐसी दशा में अवश्य मचलेगा वस्त्र हटाकर भुजा देखने के लिए।

'तू झटपट औषधीय तैल लगा दे।' मैया अब सेविका को अवसर देती है-'झटपट कर, नीलमणि आता होगा। एक द्वार पर रहो। वह आ रहा हो तो मुझे पहिले संकेत कर देना।'

'महर! मैं तो हट्टी-कट्टी अहीरनी हूँ। मुझे क्या होता है?' मैया श्रीब्रजराज से भी उलाहना नहीं देगी, ऐसा तो नहीं है। अनेक बार उन्हें भी उपालम्भ देती है-'तुमने भी तो उस दिन मुझे कुछ नहीं कहा था। तुमने पीटा क्यों नहीं मुझे ? नीलमणि कितना सुकुमार है। मैंने उसके उदर से रज्जु बाँध दी। कसकर बाँध दी। उसके उदर तथा पीठ से, वह चिन्ह पता नहीं अब भी दूर हुआ या नहीं। कितनी पीड़ा हुई होगी उसे ?'

मैया अब भी उस पीड़ा का जैसे प्रत्यक्ष अनुभव करती है 'कितने दिन मैं

उसके उदरचिह्न पर तब औषधीय तैल लगाती रही, जब वह सो जाता था। अब कौन उस पर तैल लगाता होगा, देवकी को पता होगा।'

मैया को लगता ही नहीं कि उसके रज्जु-बन्धन की पीड़ा दूर हो चुकी होगी।' वह कितना संकोची है। कितना भोला है। उसने तो एक दिन भी मुझे उलाहना नहीं दिया। दो घड़ी भी मुझसे रूठा नहीं रहा।'

'नीलमणि! मुझे पीड़ा होती है। मैया को कुछ भी तो विस्मृत नहीं होता। उसे अपना प्रश्न स्मरण है।' 'कहाँ होती है मैया?' वह हँसकर उलटे ही पूछता था-कितनी बड़ी चिड़िया है पीड़ा? शुक जैसी हरी है या काक जैसी काली?' 'अरे, मैं पूछती हूँ कि तुझे यह चिह्न दुखता है?' मैया धीरे से डरती-डरती अपने नीलमणि की उदर रेखा अंगुली से छूती थी।

'यह? यह तो बड़ी अच्छी है।' कन्हाई उस रेखा को छूकर हँसता था। उसे अपने दामोदर होने पर गर्व हो गया था-ऐसी तो किसी के भी नहीं है। भद्र के नहीं, सुबल के नहीं, तोकके नहीं और दाऊ दादा के भी नहीं।'

'वह अपनी उदर-रेखा देखकर अब भी हँसता होगा?' मैया चिन्तामग्न हो उठती है। 'तू दाऊ दादा के बना दे ऐसी।' अनेक बार श्याम मैया से मचलता था-'तोकके बना दे। देवप्रस्थ को बहुत अच्छी लगेगी।'

'मैं और किसी के क्यों बनाऊँ?' मैया हँस पड़ती थी-'दूसरे कोई तेरे जैसे ऊधमी हैं।' 'अब उसे मेरी निष्ठुरता का स्मरण होता होगा।' मैया के भीतर जैसे बड़वानल भड़क उठता है-'अब मेरे अत्याचार स्मरण करेगा तो ब्रज की ओर मुख भी नहीं करेगा।'

मैया को कितना समझाओ, यह समझ कहाँ पाती है।

ऊखल

विकट समस्या है ऊखल। इतने बड़े ऊखल को सेविकाएँ कहाँ छिपा दें? श्रीब्रजराज के घर का काम इसके बिना नहीं चलता। चल भी सकता होता तो भी इससे छुटकारा नहीं होना था। श्रीब्रजेश्वरी कभी इसे फेंक देना चाहती है और कभी इसे भुजाओं में भरकर बैठती है। गोपियों में भी कुछ है

और बालिकाएँ तो बहुत है जो दूसरों की दृष्टि बचाकर इसे सिर से स्पर्श करती है। इस ऊखल के भाग्य को कहा क्या जाये। इसकी पूजा होने लगी है ब्रज में।

'यह इतना भारी है।' मैया अनेक बार ऊखल को उठाना चाहती है। भला ऊखल कहीं एक गोपी से उठता है? हिलाती-डुलाती है और फिर रुदन करती है-'मैंने इतने भारी ऊखल से सुकुमार नन्हें नीलमणि को बाँध दिया था। वह इसे घसीटता रहा।'

मैया ऊखल के समीप पहुँचे तो गोपियों को बहुत सावधान रहना पड़ता है। यह किसी क्षण ऊखल पर सिर पटक दे सकती है। ऊखल को भुजाओं में भरकर बैठी रहे, उस पर सिर ढाले रहे, तभी तक कुशल है।

'मुझ बन्ध्या को दूसरे का पुत्र पाकर बड़ा अभिमान हो गया था। मैं उस पर अपना अधिकार प्रकट करने वाली बन गयी थी।' मैया जब ऐसी बातें करने लगती है, कोई न कोई सेविका ही उसके मुख पर हाथ धर देती है।'

'मत कहिए-ऐसी बात मत कहिए।' सेविका हाहाकार करेगी-'ब्रजेश्वर सुनेंगे तो मूर्छित होकर गिर पड़ेंगे और कहीं आपके कुमार ने सुन लिया कि मैया! उन्हें पराया मानती है तो इस ऊखल पर ही सिर पटकेंगे।'

'ब्रजेश्वरी! हम सबका वध कर दो, किन्तु यह बात मुख से मत निकालो।' गोपियों का समूह क्रन्दन करता मैया के चरण पकड़ेगा-'श्यामसुन्दर आपके पुत्र हैं, इसीलिए तो हमारे हैं। आपके नाते ही वे यहाँ आ सकते हैं।'

'आप क्या कह रही हैं?' कोई देवरानी या जेठानी समीप हुई तो रोषपूर्वक झगड़ ही बैठेगी-बरसाने की सब लड़कियों को मार देना है? कीर्तिकुमारी सुनेगी इसे तो दो क्षण उसके प्राण टिके रहेंगे? हत्या करनी है उसकी?'

मया भयभीत होकर इधर-उधर देखेगी। इसकी समझ में ही नहीं आता कि क्या निकल गया इसके मुख से अनेक क्षण मौन बनी रोती रहेगी।

'उस दिन मेरे सिर पर पिशाच चढ़ गया था।' मैया ऊखल को देखती है तो उस दिन को भूल नहीं पाती- 'तुम सबने ही तो रोका था। सब तो मना कर रही थी मुझे। मैंने किसी की नहीं सुनी।'

'यशोदा! और पुत्रवती बन तू?' मैया सिर न पटक दे, इतनी सतकर्ता

रखनी ही है सबको-तूने सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ महामाणिक पाया था, किन्तु तू उसे रखने योग्य नहीं सिद्ध हो सकी। वह इस कठोर ऊखल में बाँधने योग्य था ?'

मैया दोनों हाथों से ऊखल को दबाती है। मूर्छित भी हो जाये तो सबकी कुछ चिन्ता मिटे। तब तो सब इसे उठाकर शय्या पर सुला देंगी। उपचार करेंगी और ऊखल को किसी कक्ष में छिपा देंगी, किन्तु मैया की मानसिक पीड़ा की ज्वाला इतनी प्रबल है कि मूर्छा भी उससे दूर भागती है।

'वह इसे घसीटता फिरा। इतने भारी ऊखल को वह घसीटता रहा।' मैया चाहे जब विक्षिप्त हो उठती है 'तुम सब मुझ पर थूको। मुझ पिशाचनी की भर्त्सना करो। कोई मुझे स्पर्श मत करो। मैं सबसे तिरस्कार पाने योग्य हूँ। सब मुझसे... मेरी छाया से दूर हट जाओ। मैंने हत्यारिणी के समान अपने कुसुम-कोमल नीलमणि को इस ऊखल से बाँध दिया था।'

'वे प्रसन्न नहीं हुए थे ?' गोपियाँ मैया का मन दूसरी ओर ले जाने का प्रयत्न करती हैं-'वे स्वयं नहीं इस ऊखल से टिककर खड़े होते थे और कहते नहीं थे कि 'मैया! बाँध दे।'

'वह बहुत भोला है।' मैया का मन कभी-कभी दूसरी ओर जाता है-'वह तो झगड़ता था कि दाऊ दादा को बाँध, भद्र को बाँध, तोक को बाँध, सबको एक साथ बाँध दे। तू बाँध तो सही।'

'मैं बाँधने वाली ही तो हूँ।' मैया निढाल हो जाती है-'छोड़ना तो महर को आता है।' अब इससे कौन कहे कि सबको छोड़ने-बाँधने वाले उस चिरचपल को बाँधने में दूसरा कोई समर्थ नहीं है।

सम्वाद

विचित्र-विचित्र सम्चाद आते थे मथुरा के सम्बन्ध में। मैया को कम से कम ये बहुत विचित्र लगते थे। सामान्य सम्वाद केवल एक आया था-'राम-श्याम गुरुकुल में अध्ययन करने गये।'

'नीलमणि पढ़ेगा तो सही।' मैया को सन्तोष हुआ था। वह गोपियों से कहती थी-'अवन्तिकापुरी दूर है तो क्या हुआ। वहाँ की राजमाता है राम

की बुआ राजाधिदेवी जी। नीलमणि अग्रज के साथ पढ़ेगा तो कुछ पढ़ लेगा। अकेला तो वह पढ़ नहीं सकता था।

'राम-श्याम पढ़कर गुरुकुल से लौट आये।' तीन महीने भी नहीं हुए पूरे और यह समाचार आ गया। मैया को बहुत विचित्र लगा। इसने तो सुना है कि गुरुकुल में बालक को बारह वर्ष लगा करते हैं।

नीलमणि बहुत चपल है। वह भला कैसे चुपचाप बैठकर पढ़ता? मन नहीं लगा तो बड़े भाई के साथ भाग आया।' मैया को नहीं लगता कि इतने अल्प समय में कुछ पढ़ भी सकता है, किन्तु इससे कोई क्षोभ इसे नहीं है-'ब्रजेश्वर के कुमार को पढ़कर करना भी क्या है? उसके सब भाई और सखा तो बिना पढ़े ही हैं।'

मैया को उल्टे सन्तोष हुआ-'अब वह यहाँ लौट आवेगा। मथुरा के पढ़े-लिखे लोगों में वह स्वयं ऊब जायेगा। पढ़ने के लोभ से ही वहाँ अब तक टिका था।'

'कृष्णचन्द्र ने कुब्जा से मैत्री कर ली है।' सम्वाद तो यह भी मैया तक पहुँच ही गया।

'अभी उसे कछनी तो बाँधनी नहीं आती।' मैया वियोग-व्यथा भूलकर उस दिन खुलकर हँसी-'लेकिन यहाँ भी गोपियों के घट फोड़ देता था। कूबड़ी को चिढ़ाने में उसे आनन्द आता होगा।'

प्रत्येक सम्वाद का मैया अपने ढंग का अर्थ कर लेती है। लेकिन सम्वाद तो विकट आने लगे-'मथुरा पर जरासन्ध ने चढ़ाई कर दी है। वह तेइस अक्षौहिणी सेना ले आया है।'

मैया नहीं समझती कि अक्षौहिणी क्या होता है, किन्तु सुनती है-'उतनी सेना जितनी पूरे ब्रज गायें भी नहीं हैं, तो सिर पकड़कर बैठ जाती है।

राम-श्याम ने सब सेना मार दी। अकेला जरासन्ध हारकर भाग गया। यह समाचार शीघ्र न आ गया होता तो मैया के प्राण वैसे ही निकल जाते।

'मथुरा के चारों ओर से रक्त की दलदल हो गई है। मुर्दे गिरिराज गोवर्धन से ऊँचे चारों ओर बिछे पड़े हैं।' यह समाचार भी आया।

'मेरे नीलमणि को वहाँ से कैसे भी निकाल लाओ।' मैया को धुन चढ़ गयी। 'निकाल लाओ दाऊ को, रोहिणी जीजी को। जो आ सकें, सबको ले आओ।'

'वे शव सड़ेंगे। बहुत दुर्गन्धि फैलेगी वहाँ। उसमें नीलमणि कैसे रहेगा?' मैया को समझाया नहीं जा सकता कि इस समय मथुरा के लोगों के आधार ही कृष्णचन्द्र हैं। वे इस संकट में मथुरा नहीं छोड़ सकते।

'मैं जाऊँगी?' मैया सुनना नहीं चाहती कि मथुरा जाना इस मसय सम्भव नहीं है। बाबा को बहुत कठिनाई से इसे रोके रहनापड़ता है।

'जरासन्ध, जरासन्ध, जरासन्ध! सुनते सुनते जैसे कान पक गये हैं। जरासन्ध आने वाला है। जरासन्ध आ रहा है। जरासन्ध आ गया है। जरासन्ध हारकर भागा। जरासन्ध की सेना के सेनिकों, गजों, अश्वों के शवों से मथुरा अगम्य हो गयी है।' मैया जरासन्ध के नाम से चिढ़ती है-'यह कंस क्या मरा, उसका श्वसुर प्रेत की भाँति मथुरा के पीछे ही पड़ गया है।'

इन सम्वादों में लगभग अन्तिम सम्वाद ही था-'जरासन्ध के आक्रमणों से बचने के लिए राम-श्याम मथुरा के सब लोगों को लेकर द्वारिका चले गये। वहाँ समुद्र के मध्य में जा बसे हैं।'

'और करते भी क्या। जरासन्ध से पीछा तो छूटा।' मैया ने उस समय जैसे सन्तोष की श्वास ली-'वे दोनों सुख पूर्वक रहें, सुरक्षित रहें। हमारा क्या है, हम कैसे भी जीवन के दिन काट लेंगे।'

'द्वारिका कहाँ है? कितनी दूर है?' मैया यह जिज्ञासा भी बहुत डरते डरते करती है।' द्वारिका से यहाँ के मार्ग में कहीं जरासन्ध तो नहीं पड़ता?'

'नीलमणि कैसे आवेगा?' अब सम्वाद नहीं आते। मैया प्राय: हताश हो जाती है-'मार्ग में जरासन्ध के सैनिक उसकी घात में बैठे होंगे। उसे नहीं आना चाहिए। वह सकुशल रहे।'

'महर! तुम भी तो नहीं जा सकते।' मैया का आग्रह अब दूसरा है-'तुमको जरासन्ध ने पकड़ लिया तो नीलमणि वहाँ बैठा नहीं रह सकेगा। वह सुख से रहे। कोई मत जाओ, कहीं मत जाओ।' लेकिन कितनी पीड़ा है इस निषेध में भी।

अतिथि

विश्व का केन्द्र हो गई है द्वारिका। अत: क्या अनुचित है यदि मैया प्रत्येक अतिथि अभ्यागत से पूछती है-'मेरे नीलमणि को देखा है आपने? आपने उसके सम्बन्ध में कुछ सुना है? वह सकुशल है? प्रसन्न है?

सच बात है कि ब्रज में अधिकांश अतिथि द्वारिका होकर ही आते हैं। जो एक बार यहाँ हो गये हैं, वे यदि सिद्ध ऋषि मुनि हुए तो यहाँ पुन: आने से पूर्व द्वारिका हो आते हैं। उन्हें इस ब्रजेश्वरी को द्वारिका का सम्वाद देना रहता है। जो द्वारिका पहुँचते हैं, उन्हें ब्रज का, ब्रजवासियों का, नन्दबाबा का और मैया का इतना महात्म्य सुनने को मिलता है कि ब्रज आये बिना उनसे रहा नहीं जाता।

'पता नहीं कैसा है ब्रज और कैसे हैं ब्रज के लोग?' द्वारिका के जान-जन के मुख पर प्राय: एक ही चर्चा रहती है,'हमारे वासुदेव तो वहाँ की चर्चा से ही विभोर हो जाते हैं और संकर्षण ही नहीं महामन्त्री उद्धव जैसे साक्षात् देवगुरु बृहस्पति के शिष्य भी ब्रज की चर्चा चलने पर अपने शरीर की सुधि तक विस्मृत कर बैठते हैं।'

ऋषि-मुनियों को, सिद्धतपस्वियों को, महर्लोक, जनलोक तथा सत्यलोक के भी देवर्षि, परमर्षि वर्ग को श्रीकृष्ण चन्द्र के दर्शन से अधिक दूसरा कोई आकर्षण समाधि में भी नहीं रह गया है। द्वारिका जाना है इन्हें उन श्रीद्वारिकाधीश के दर्शन करने और द्वारिका जाने पर ब्रज की चर्चा न सुनने को मिले, सम्भव नहीं है। द्वारिका जाने पर सबको अनुभव होता है कि ब्रज का दर्शन किये बिना उसकी द्वारिका-यात्रा अर्थहीन है। द्वारिका सार्थक ही है ब्रज का प्रसाद प्राप्त करके।

मैया ब्रह्ममुहूर्त से ही पुकारने लगती है-'अतिथि आते होंगे मेरे नीलमणि का समाचार लावेंगे। उनके स्वागत की व्यवस्था करो। कोई थोड़ी दूर जाकर देख आओ कि कोई ऋषि-मुनि आ रहे हैं? उन्हें आदरपूर्वक ले आओ।'

'महर! तुम जाकर देखो तो सही।' मैया प्राय: श्रीब्रजेश्वर से अनुरोध करती है-'कोई ऋषि-मुनि किसी और के घर आये होंगे। मैं वहीं चली जाऊँगी। वे मेरे नीलमणि को देखकर आये होंगे।'

ऐसा नहीं है कि मैया सदा समाचार पाने को उत्सुक ही रहती हो। ऐसा बहुत कम होता है। तब होता है, जब अपेक्षाकृत स्वस्थ रहती है। तब कहीं बादल गरज पड़ें वर्षा होने लगे तो इसे स्मरण नहीं रहेगा कि ऋतु कौन सी है? तब हताश हो जायेगी-'चातुर्मास्य आ गया। अब कोई ऋषि-मुनि नीलमणि का समाचार भी देने चार महीने नहीं आवेगा।'

सेविकाएँ तो इसे चातुर्मास्य में भी समझा लेती हैं-'सब ऋषि-मुनि कहाँ चार महीने यात्रा स्थगित रखते हैं। कोई दो महीने एक स्थान पर रहते हैं, कोई एक महीने। दिव्य लोकों के सिद्ध तो कभी भी आ सकते हैं। उन्हें कहाँ भूमि पर चलना है कि उन्हें चातुर्मास्य का बन्धन है।'

'यह तो शारदीय वर्षा है।' गोपियाँ मैया को आश्वासन देती रहती हैं। लेकिन मैया इतनी भी स्वस्थ कितने दिन रहती है? कोई ऋषि-मुनि आवे तो उसका सत्कार इसका व्यसन है। स्वस्थ हो या अस्वस्थ, अतिथि के सत्कार में जुट जायेगी, किन्तु कोई द्वारिका के समाचार सुनाने लगेगा, श्रीकृष्णचन्द्र की चर्चा करेगा तो हक्की-बक्की हो उठेगी।

'कृष्णचन्द्र, अच्छा! मन में कहेगी-'पता नहीं किसके कौन से कृष्ण की बात है?'

'मेरे नीलमणि को आशीर्वाद दे जाइये! वह अभी सो रहा है।' अपनी शैया पर से उत्तरीय से ढ़का तकिया उठाने जायेगी। 'यह तो तकिया है।' ऐसे अवसर पर सेविकाओं को कहना ही पड़ता है।

'अच्छा! मैया अपने उन्माद में फिर भी हँसेगी-'मैं ही पगली हूँ। वह बड़ा हो गया है। गायें चराने गया है। किसी को भेजकर उसे बुला ले। ऋषि महाराज को मैं तब तक रोकती हूँ। ये उसे आशीर्वाद देंगे।

'ये ऋषि महाराज आपके कुमार का ही तो समाचार देने आये हैं।' सेविका को कहना पड़ता है। जानती है कि अभी सावधान नहीं कर देगी तो

कुछ स्वस्थ होने पर उसकी ये स्वामिनी बहुत अधिक दु:खी हो जायेगी। 'वे बड़े भाई के साथ मथुरा से भी द्वारिका चले गये हैं।'

'वह सुखी रहे।' मैया सावधान होकर अत्यधिक दु:खी हो जाती है-'वह प्रसन्न है? क्या करता है? कैसे रहता है? दुबला हो गया होगा।'

मैया को पता नहीं क्या-क्या पूछना रहता है, किन्तु कितनी भी उन्मादिनी हो, अपनी, अपने दु:ख की, ब्रज की चर्चा नहीं करेगी। सदा इसे भय रहता है-'कोई यहाँ की चर्चा उससे जाकरन करे। वह सुनकर दु:खी होगा।'

गृहपशु

वृषभ और गायें तो देवता हैं। ब्रज में गोप न कृषि करते और न गो-विक्रय करते। करते हैं केवल गोदान। इसमें वृषभ दान भी सम्मिलित है।

इनके अतिरिक्त भी पशु हैं ब्रज में। कुत्ते, बिल्लियाँ, बन्दर, गिलहरियाँ। सच कहें तो यहाँ वनपशु और गृहपशु का अन्तर करना ही कठिन है। शशक और मृग ही नहीं, बाराह, व्याघ्र-केसरी तक श्यामसुन्दर के साथ गायों में मिले चले आया करते थे। उन्हें गायों में पृथक करके भगा देना कठिन था। अवश्य उन्हें गोप बाँधते नहीं थे। गोष्ठों में बन्द नहीं करते थे, किन्तु कुत्ते-बिल्ली ही कहाँ बाँधे या गोष्ठ में बन्द किये जाते हैं। वन-पशु भी उनके साथ गलियों में घूम-फिरकर रात्रि में नन्दद्वार के आसपास ही बैठते थे। अब भी उन्होंने अपना पुराना स्वभाव छोड़ा नहीं है।

व्याघ्र, सिंहादि को रात्रि में निद्रा नहीं आया करती। ये नन्दग्राम के स्वेच्छा प्रहरी बन गये थे रात्रि में और बालकों ने इनके नाम रख दिये थे। गोपियाँ, बालिकाएँ तक इनसे परिचित हैं। कोई रात्रि में कहीं घर से निकले तो इनमें से दो चार स्वेच्छा से संरक्षक बनकर साथ चल देंगे। डाटो तो पूँछ हिलावेंगे या पैरों में लेट जायेंगे।

अब ये पशु-गृह पशु और वनपशु भी जो ग्रामपशु के ही समान हैं, गोपियों के लिए समस्या बन गये हैं। ये चाहे जब नन्द-भवन में घुस आते हैं और मैया के सामने उसके चरणों में बैठकर, लेटकर नाना प्रकार के शब्द

करते हैं अनेक प्रकार की चेष्टाएँ करते हैं।

बिल्लियाँ ही नहीं, व्याघ्रसिंह, बाराह भी मैया का चलना कठिन कर देते हैं। इन्हें न डाँटा जा सकता, न डराया जा सकता। लकुट या शाटि का उठाने पर भूमि में लेट जाते हैं। ये दुर्बल, कंकालप्राय पशु-इन पर क्रोध कैसे किया जाये? यही थे कि इनका स्वस्थ, सुचिक्कन, मांस भरा शरीर दृष्टि मुग्ध करता था और अब इनकी ओर देखा नहीं जाता है। ये जीवित है, यही कम आश्चर्य नहीं है।

दधि, नवनीत सूँघने का भी कोई कष्ट नहीं करता। कुत्ते हों या बिल्ली या और कोई, किसी आहार को मुख नहीं लगाते सब। मैया अपने करों से दे तो भले कुत्ते या बिल्ली तनिक दधि चाट लें, शशक, गिलहरी, मृग आदि तृण या मोदक में-से कुछ खालें, अन्यथा दूसरे के हाथ से तो यह भी इन्हें स्वीकार नहीं।

'नीलमणि नहीं आया?' सायंकाल कुत्ते, बिल्लियाँ, मैया के चरणों में लेट-लेटकर, बोल-बोलकर इसे भूले नहीं रहने देते।

'नीलमणि वन में नहीं है?' दिन में ही मृग या व्याघ्र जब भवन में आकर मैया के सम्मुख लेटकर नाना प्रकार की चेष्टा करने लगें तो मैया अपने लाल को भूली कैसे रहे? ये पशु उससे उसके कुमार का दर्शन कराने का ही तो अनुरोध करते हैं। मैया तथा गोपियों को भी अब यह बात समझने में कुछ सोचना तो नहीं रह गया है।

गोपियाँ खीझती हैं-'ये ब्रजेश्वरी को तनिक भूले भी नहीं रहने देते।' 'मैं उसे कहाँ से लाऊँ?' मैया बैठकर पशुओं पर हाथ फिराते-फिराते स्वयं क्रन्दन करने लगती है-'वह ब्रज में है ही कहाँ।'

'वह आवेगा-अवश्य आवेगा।' कभी ऐसे आश्वासन देती है, थपकाती सहलाती है जैसे ये पशु भी बालक या बालिका हों और उसकी बात समझते हों-'महर कहते है कि वह आवेगा। वे झूठ तो बोलते ही नहीं।'

'तुम सब इतने दुर्बल हो। तुम्हें देखकर नीलमणि दु:खी हो जायेगा।' मैया इनको कुछ-न-कुछ खिलाने का प्रयत्न करती है-'वह तो तुमसे स्नेह

करता है। तुम्हारे साथ खेलता है। तुम दुर्बल रहोगे तो तुम्हें देखकर रो पड़ेगा। तुम कुछ तो खाओ। कुछ नहीं खाओगे तो उसके साथ कैसे खेल सकोगे ?'

मैया का वात्सल्य अनन्त है। इस वियोग की विषम पीड़ा में भी इसका वात्सल्य असीम है। यह किसी प्राणी को दु:खी नहीं देख पाती। दधि, दूध, नवनीत, मोदक, तृण... पता नहीं क्या-क्या उठाकर लाती रहेगी और प्रयत्न करेगी कि प्रत्येक पशु कुछ खाये।

मैया को यह भी स्मरण नहीं रहता है कि बिल्ली या व्याघ्र तृण नहीं खा सकते अथवा मृग शशक दूध नहीं पीते। यह तो गोपियों को, सेविकाओं को समझाते, बतलाते रहना है इसे। यह तो जो हाथ में आवे, वही सामने के पशु को खिलाने का प्रयत्न करेगी।

मैया के करों से दियादधि या नवनीत मृग भी तनिक चाट ही लेते हैं। व्याघ्र-केहरी भी मोदक या रोटी खा लेते हैं। मैया के वात्सल्य ने ही इन सबको जीवित रखा है, किन्तु सेविकाएँ सन्तुष्ट नहीं इन पशुओं से-'ये स्वामिनी को तनिक तो भूले रहने देते।' किन्तु ये अबोध मूक पशु-इन पर क्रोध ,क़ैसे किया जा सकता है।

पक्षी

विहंग मयूर भी है भले वह बहुत थोड़ा उड़ पाता हो। ब्रज में तो मयूरों ने गोपों के आँगनों में घूमते रहना, नाचते रहना अपना स्वभाव बना लिया है। लेकिन नन्द बाबा का आँगन तो इतने पक्षियों से भरा रहता है कि उनकी जाति पहिचानना कठिन है।

कन्हाई सूतिका गृह से बाहर आया और पक्षियों का आकर्षण केन्द्र हो गया। पक्षी उसके पालने पर बैठे रहते थे और उड़ाने पर भी वहीं फुर्र-फुर्र उड़ते रहते थे। वह घुटनों सरकने लगा तबसे तो पक्षियों का समूह सचमुच पक्षी-कृष्ण का पक्षपाती हो गया। अपनी भाषा में उससे पता नहीं क्या कहते रहते और उसके आसपास ही फुदकते रहते थे।

अब कृष्ण ब्रज में नहीं है तो भी पक्षियों का समूह ब्रजराज का आँगन नहीं छोड़ता है। उलटे इनकी संख्या बढ़ ही गयी है। पता नहीं ये अब किस आशा में यहीं मंडराते रहते हैं।

मैया पक्षियों को दाने डालती है। आँगन में फल रखती है। पक्षी इतने ढीठ हो गये हैं कि गौरैये जैसे छोटे पक्षी ही नहीं, कपोत, चकोर तक चाहे जब इनके कन्धों पर बैठ जाते हैं। मयूर ही नहीं हंस भी इसकी गोद में बैठकर सो जाना चाहते हैं, यदि यह बैठी मिल जाये।

'तुम नीलमणि के समीप से आये हो?' मैया को लगता है कि पक्षी इसके लाल से मिलकर ही आते हैं। इसने सुन रखा है कि हंस सन्देश-वाहक बना करते हैं। किसी हंस के आँगन में उतरते ही उसे कुछ खिलाने दौड़ती है। अंक में पुचकारकर बैठाती है-'नीलमणि प्रसन्न है?'

'मेरे श्यामसुन्दर से ऐसा कुछ मत कहना, जिससे वह उदास हो जाये।' मैया केवल हंसों से ही नहीं, सारसों, कपोतों, चातकों तथा नन्हीं बुलबुल, फूलसुंघी तक से बातें करती रहती है-अपने नीलमणि की बातें। पक्षी कुछ भी बोल दें तो प्रसन्न हो जाती है।'

'मैं तुम्हारी बात नहीं समझ पाती। गाँव की ग्वालिन ही तो हूँ, किन्तु नीलमणि तो शैशव से तुम सबकी बात समझता था।' मैया विभोर होकर कहती है-'वही मुझे बतलाता था कि कपोत क्या कहता है अथवा गिलहरी क्या माँगती है। वह तुम सब पशु-पखियों की बात समझ लेता है।'

मैया के आँगन में तो पशु-पक्षी सदा मिले ही रहे हैं। पक्षी स्वतन्त्र हैं पशुओं के शरीर पर बैठने अथवा उनके पैरों के मध्य घूमने को। ये तो किसी भी बालक गोपी या गोप के कन्धे पर सिर पर चाहे जब बैठ जाने वाले हैं।

मैया पशुओं पर अत्यन्त सदय है तो पक्षियों पर इसका स्नेह उमड़ पड़ता है। पशु श्याम के वियोग में दुर्बल, दीन हो रहे, किन्तु पक्षियों की दुर्बलता इनके पंख छिपाये रहते हैं। अवश्य इनके पंख मलिन हो रहे हैं-किन्तु मैया का ध्यान इधर कम जाता है। यह समझ नहीं पाती कि पक्षी क्यों उदास दीखते हैं।'

'नीलमणि ने तुम्हें खिझा दिया है ?' पक्षी अपना सिर पंखों में छिपाकर बैठने लगे तो मैया को यही लगता है कि यह उसके लाल से रूठकर आया है।' 'वह चपल है। अपने सखाओं से भी झगड़ लेता है, किन्तु किसी सखा का रूठना तो सह नहीं सकता। तुम चले आये, वह तुम्हें अवश्य ढूँढता होगा। उससे रूठो मत। उसे आशीर्वाद देना। मैं तुम्हें अभी खिलाती हूँ।'

'तुम्हारे तो पंख हैं। तुम नीलमणि के समीप उड़कर जा सकते हो। नगर में उसके समीप न भी उतर सको तो उसे दूर से देख सकते हो।' मैया बहुधा दु:ख-कातर हो उठती है-'तुम पर विधाता का अनुग्रह है। मुझे देखो कि मैं कितनी विवशा हूँ। मुझ पंखहीना दु:खिया को कोई मेरे नीलमणि के समीप पहुँचाता नहीं है। मैं उसका कमल मुख देखे बिना ऐसे घुट-घुटकर मर जाऊँगी।'

'नहीं, यह सब उससे मत कहना।' मैया बहुत शीघ्र हड़बड़ा उठती है-'वह बहुत सुकुमार है। बड़ा कोमल हृदय है उसका। बहुत शीघ्र उसके कमल-लोचनों से अश्रु गिरने लगते हैं। उसे ऐसा कुछ मत कहना जिससे वह दु:खी हो। मेरा क्या है, मेरे दिन किसी प्रकार बीत ही जा रहे हैं।'

'वह अभी सो रहा है। अभी-अभी सोया है।' मैया कभी सुध-बुध भूली रहती है। अपने तकिये को थपकाना छोड़कर आँगन में आती है-'तुम सब बहकाना पुकारना मत। मैं तुम सबको चारा-चुग्गा डालती हूँ। चुपचाप खाओ। हाँ, मेरे पास बैठो, पर नीलमणि को जगाओ मत।'

सेविकाओं का पशुओं के समान पक्षियों के प्रति आक्रोश नहीं है। इनको भी लगता है कि पक्षी श्यामसुन्दर के समीप होकर आते हैं। मैया को ये आश्वासन देते हैं।

काक

वियोग सभी को बहुत संवेदनशील बना देता है। मैया तो है ही भावनामयी। यह तो नीलकण्ठ, क्षेमकरी (श्वेतचील) देखते ही पता नहीं क्या-क्या सोचने लगती है। कौए इसे अब बहुत प्रिय हो गये हैं। कोई काक आँगन में आ बैठे तो यह उसके लिए तत्काल रोटी, दही ले आवेगी।

'काक! तुम भले आये। मेरा नीलमणि आ रहा है?' पता नहीं कब किसने काक बोली से शकुन देखने की प्रथा प्रचलित की, किन्तु दूरस्थ प्रियजन के मिलन की आसान सूचना काक बोलकर देता है, यह मान्यता बहुत प्राचीन है। गाँवों के लोगों का जीवन ऐसी असंख्य मान्यताओं को लेकर चलता है। ब्रज में सरल विश्वासी लोग हैं। मैया विश्वास की मूर्ति है। अत: काक को देखकर इसमें आशा, उमंग जागती है। जागती ही रहती है, क्योंकि काक तो दिनभर आँगन में आते रहते हैं।

'तनिक उड़कर बैठो'तो सही।' मैया अनुरोध करती है। ऐसे अनुरोध करती है, जैसे काक इसकी बात समझता है। मेरा नीलमणि चल पड़ा है?'

'तुम बहुत अच्छे हो। मैं प्रतिदिन तुम्हें दूध-भात खिलाया करूँगी।' मैया काक को पता नहीं कितने प्रलोभन देती है-'तुम्हारी चोंच सोने से मढ़वा दूँगी। तुम्हारे पैरों में रत्ननूपुर पहिनाऊँगी। मेरा नीलमणि कब आवेगा कहो तो।'

'आज काक पता नहीं कितने प्रकार के शब्द कर रहा है।' भवन में जो गोपियाँ, सेविकाएँ होंगी, मैया सबको बुलावेगी। श्रीब्रजेश्वर तक को बुलाने भेजेगी किसी को- 'सुनो तो सही, यह क्या कह रहा है? मेरा नीलमणि सुखी और प्रसन्न है?'

मैया नहीं समझती कि काक शावक कुछ भिन्न प्रकार का शब्द भी माता-पिता को पुकारने के लिए करते हैं। खाद्य-सामग्री हो तो कौए अपने वर्ग को पुकार-पुकारकर बुलाते हैं। अपने प्रयोजन से ही प्राय: वे बोलते हैं। लेकिन मैया यह सब कहाँ सुनती है। काक भिन्न ढंग से बोलता है तो इसका हृदय काँपता है-'यह कोई अशुभ तो नहीं सूचित करता।'

'काक! कुछ अनर्थ होने वाला हो तो मेरा होने दो। तुम मेरे सिर पर बैठ जाओ।' जैसे अनर्थ कौए के नियन्त्रण में ही हो-'मेरे नीलमणि को कुछ नहीं होना चाहिए। मुझ दु:खिया के लिए तो मृत्यु भी वरदान है।'

'आप ऐसी अमंगल बात क्यों मुख से निकालती हैं?' सेविकाएँ कातर कंठ कहेंगी।'

'अमंगल बात? मैंने किसी के लिए कुछ अमंगल कह दिया?' मैया

इतनी भोली है कि इसे अपनी बात का भी ध्यान नहीं रहता। 'यह काक कुछ कह रहा है।'

'यह तो अपने साथियों को आपकी रोटी-दही खाने का निमन्त्रण दे रहा है।' सेविका दूसरा क्या कहे?'

'काक! तुम भरपेट खाओ। अपने सब साथियों को बुला लो। मैं सबको भोजन दूँगी।' मैया फिर कौए से अनुरोध करने लगेगी-'लेकिन मुझ दुखिया पर तनिक दया करो। तनिक उड़कर बैठो। मुझे बताओ कि मेरा नीलमणि आ रहा है? मैं अपने उस अंकधन के बिना अन्धी हो रही हूँ।'

'आज काक मेरे पूछने पर आँगन में आ बैठा था।' काक कहीं उसी समय तनिक उड़कर बैठ जाये तो मैया उसके बैठने का अर्थ जो मिलेगा, उसी से पूछती रहेगी- 'नीलमणि इस आँगन में आवेगा?'

'आज काक मेरे पूछने पर उड़कर चला ही गया।' मैया का मन मथित हो रहा है-'वह मेरे नीलमणि को बुलाने या देखने गया है? वह मुझसे रूठ गया? मुझसे तो दैव ही रूठा है काक! तुम मुझसे क्यों रूठते हो?'

'काक आज मेरे पूछने पर पूर्व दिशा से उड़कर उत्तर की ओर जा बैठा।' मैया को काक की प्रत्येक चेष्टा में कोई सन्देश जान पड़ता है, किन्तु यह सन्देश समझ नहीं पाती यह बड़ी उलझन है। जिस-तिस से पूछती रहती है। कोई तो काक चेष्टा का अर्थ जानती होगी। कोई इसे इसके मन की बात कहेगी?'

काक, नीलकण्ठ, खञ्जन प्रभृति अनेक पक्षी हैं जिनकी चेष्टा, बोली, जिनके दर्शन की दिशा, स्थिति से शकुन अशकुन देखने की प्रथा है। इनमें से प्रत्येक को देखकर मैया के मन में एक ही बात उठती है-'नीलमणि आ रहा है? वह मिलेगा मुझे?'

स्नान

विशेष पर्व भी प्रत्येक दिन पहुँचते रहते हैं, ऐसा विचित्र विधान है। मैया को शीतलकाल में भी पर्व पर यमुना-स्नान ही करना है और ये पर्व ऐसे हैं

कि सब मनाओ तो एक दिन कई-कई हैं। वैशाख, श्रावण, कार्तिक, मार्गशीर्ष, माघ ये पूरे मास प्रात: स्नान के पर्व हैं। सप्ताह का प्रत्येक दिन किसी ग्रह का है, प्रत्येक तिथि किसी देवता की है। इसके अतिरिक्त विशेष पर्व से रिक्त कोई दिन नहीं। मैया के विशेष पर्व और भी अधिक हैं। कभी उसके नीलमणि की जन्मतिथि है, कभी जन्मनक्षत्र है। कृष्ण की न हो तो दाऊ की, श्रीब्रजराज की, भद्र की, तोक की किसी-न-किसी के निमित्त विशेष पर्व है।

पर्व है तो प्रात: सूर्योदय से पूर्व यमुनास्नान भी करना ही है। मैया उठते ही चिन्ता करेगी-'मेरे नीलमणि को ठण्ड लग जायगी।'

'अब आपके कुमार बड़े हो गये हैं।' यह स्मरण सेविकाओं को अनेक बार कराना पड़ता है। मैया को तो यही लगता रहता है कि उसका नीलमणि अभी उसका स्तनपान ही करता है।

'बाबा के साथ वह स्नान करने चला गया?' मैया को शीघ्रता लगेगी। यमुनातट पहुँचकर यह पुकारेगी-'नीलमणि! दाऊ!'

'वह यहीं पुलिन पर खेलता था।' अब मैया को स्मरण आवेगा कि उसका अंकधन तो ब्रज में ही नहीं है।' उसे इस कालिन्दी में स्नान करना बहुत प्रिय लगता था। सखाओं के साथ पानी उछालते जल से निकलना ही नहीं चाहता था।

मैया स्नान करते कभी मूर्ति की भांति स्थिर खड़ी रह जायेगी। कभी व्याकुल इधर-उधर देखेगी। शीतकाल में भी इसे अपने शरीर की सुधि नहीं रहती। सेविकाएँ सम्हाल कर न निकालें तो जल में खड़ी ही रहे। यह तो जल में खड़ी रहेगी और स्नान करना है, यह स्मरण भी नहीं रहेगा।

'आप सूर्य-तनूजा हो।' मैया अनेक बार हाथ जोड़कर या अञ्जलि अथवा अञ्चल फैलाकर प्रार्थना करने लगती है-'मैं वत्सहीना गौ जैसी हो गयी हूँ। मेरा नीलमणि मुझसे खो गया। वह भले दूर चला गया, किन्तु वहाँ सुखी रहे, प्रसन्न रहे।'

'वह लौट आवे।' कोई गोपी या सेविका यह कह भी दे तो मैया शीघ्रता से घूमकर उसकी ओर देखेगी-'वह तो आवेगा ही, किन्तु कोई संकोच

उठाकर, कुछ भी हानि करके क्यों आवे? देवता उसके मन पर दबाब डाले-यह तू क्यों चाहती है?'

यमुना प्रत्यक्ष होकर बोल पाती तो मैया के चरण पकड़कर यही तो कहतीं- 'माँ! मैं तो तुम्हारे पुत्र के चरणों की सेविका हूँ। तुम्हारे चरणों का स्पर्श मिलता है, यही मेरा सौभाग्य है। तुम्हारी चरणरज के प्रसाद से उनकी प्रीति पाने की स्वयं आशा करती हूँ। कोई देवता नहीं जो तुम्हारे कुमार को प्रभावित करने की बात भी सोच सके। सब उनकी कृपा के ही याचक हैं।'

कालिन्दी भले द्वारिका में पट्टमहिषी हों, ब्रज में तो इनमें प्रत्यक्ष होने का भी साहस नहीं है। यहाँ तो इस द्रवरूप में ही सेवा का सुअवसर मिल सकता है। अत: इन्हें यहाँ सब संकोच नीरव इस नीर रूप में सहना ही है। मैया तो स्नान करके दूध चढ़ावेगी, चन्दन, पुष्प, अक्षतादि से पूजा करेगी और नैवेद्य अर्पित करके नीराजन के अतिरिक्त प्रणाम भी करेगी।

यमुना का कुछ संकोच दूर होता है जब मैया भगवान भास्कर को अञ्जलि तथा लाल करवीर पुष्प की अञ्जलि देने लगती है। मैया को कोई द्वारिका के सम्बन्ध सूचित भी कर दे यह मान लेगी? यह तो बार-बार स्मरण कराने पर भी भूल जाती है कि इसका नीलमणि अब माता कास्तनपान करने जितना छोटा नहीं है। यह तो यहाँ स्नान-पूजन करते भी बीच में चौंकती है-'नीलमणि जाग गया होगा। वह भूखा होगा।'

सेविकाएँ सम्हालती रहती हैं। शीतकाल की ठिठुरन में वस्त्र डालती हैं तो मैया झल्लाती है-'नीलमणि अपनी कमरिया भी नहीं ले गया है और तुम सब मुझ बुढ़िया को ही बचाने में मरी जा रही हो। तुम सब समझती क्यों नहीं हो कि रोग, मृत्यु सबको मेरी जैसी भाग्यहीना के समीप आते भय लगता है। मुझे कुछ होने का नहीं है।'

'आज विशेष पर्व है, एकादशी है।' मैया को एकादशी अथवा प्रदोष, कालाष्टमी या गणेश चतुर्थी का कब स्मरण आवेगा, कोई ठीक नहीं हैं। चाहे जब स्नान करने को उद्यत हो जायेगी।'

'आपने आज स्नान तो कर लिया है।' सेविकाओं को स्मरण दिलाना

है- 'अभी कल आपने चतुर्थी का ब्रत किया था, आज ही एकादशी कैसे हो जायेगी?'

मैया शिथिल होगी या दूसरा पर्व सोच लेगी, यह भी निश्चित नहीं है।

पूजन

विशुद्ध सकाम उपासना ब्रज में तो कोई निष्काम है नहीं और न निष्कामता का दम्भ करता है। यह दूसरी बात है कि ब्रज की इस सकामता की समता सृष्टि में नहीं है। कोई निंष्कामता या पूर्णता इसका सौवाँ भाग भी नहीं हो पाती है।

'श्यामसुन्दर सकुशल रहें। प्रसन्न रहें।' एकमात्र कामना ब्रज के जन-जन की। प्रत्येक हृदय इसी आवेग में धड़कते हैं। प्रत्येक श्वास यही माँगती-पुकारती है।

केवल निष्क्रिय कामना नहीं, जीवित, अत्यन्त सक्रिय कामना। इस कामना ने सभी को उपासक बना रखा है-आर्त, अर्थार्थी। लेकिन कामना इतनी प्रबल है कि निष्ठा का इसमें प्रश्न ही नहीं उठता। जब किसी के प्राण प्यास से छटपटाएते हों, पानी कूप का या सरिता का, यह प्रश्न उठ सकता है? ब्रज के प्राण छटपटा रहे हैं श्याम-प्रेम की प्रबलतम पिपासा से।

दूसरों की नहीं, मैं मैया की-ब्रजेश्वरी मैया यशोदा की ही बात कर रहा हूँ इसका जीवन ही उपासना बन गया है। सबेरे से पूजन प्रारंभ होगा तो समाप्त होने का नाम ही नहीं लेता।

मैया किसका पूजन करती है? यह पूछो कि मैया किसका पूजन नहीं करती है?

यह तो चींटी, बन्दर, बिल्ली, कुत्ते, काक तक सभी पशु-पक्षियों का, अपने सेवक-सेविकाओं तक का पूजन ही करती है। सबका सत्कार, सबको सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करती है पूज्य बुद्धि से, आदर से, श्रद्धा से करती है और कैसे कोई यह पूजन अस्वीकार कर देगा, जब दासियों से अथवा चींटियों तक से कहती है-'मेरे नीलमणि को आशीर्वाद देना।'

'प्रत्येक प्राणी में परमेश्वर' मैया के लिए यह तथ्य इसके अपार वात्सल्य ने प्रत्यक्ष कर रखा है। मैया प्रत्येक का पूजन करती है। प्राणी-पूजन की बात छोड़ दीजिए। देव-पूजन भी कम नहीं हैं। सूर्य, यमुना, गायें, वृषभ, अश्वत्थ, तुलसी, नीम, वट पाकर आमला देवता हैं या नहीं ? अतिथि देवता हैं। ब्राह्मण देवता हैं। कुमारी कन्याएँ तथा सौभाग्यवती महिलाएँ देवता हैं। मैया का विश्वास शतांश भी मिल जाये तो विश्व देवताओं से ही परिपूर्ण दीखने लगे।

पृथ्वी देवता, जल देवता, अग्नि देवता, वायु देवता, आकाश देवता। रात्रि में चन्द्र देवता और तारक भी देवता। जीवन देवतामय है। देवताओं की दया से उनकी गोद में पल रहा है।

भगवान नारायण कुलदेव हैं। इनका पूजन श्रीब्रजराज प्रतिदिन करते हैं। भगवान शिव का पूजन सविधि करते हैं। गणपति पूजन के बिना तो कोई पूजन पूरा नहीं होता। देवी लक्ष्मी, सरस्वती, गौरी का पूजन मैया को प्रतिदिन ही करना है।

ग्रामदेव और ग्राम कालिका, गृहदेवता, इनके अतिरिक्त शनिवार को शनि और हनुमान, रविवार को सूर्य सोमवार को चन्द्र तथा शिव, मंगल को, भौम, भूमि एवं हनुमान, बुध को केवल बुध ग्रह नहीं, बुद्धि की देवी सरस्वती भी, गुरु को देव गुरु बृहस्पति, जगत्स्रष्टा ब्रह्मा तथा शुक्र को शुक्राचार्य, शुक्राधिदेव वरुण की विशेष पूजा का अवसर आता है।

कालाष्टमी को महाकाली, काल भैरव को पूजित करना है तो सप्तमी ऋषियों की है। एकादशी, द्वादशी, प्रदोष, पूर्णिमा, अमावस्या-कोई तिथि नहीं जो किसी देवता की विशेष उपासना तिथि न हो।

मैया को प्रातः ही सूझता है कि उसका ब्रत करना है, पूजन करना है। दासियों को, गोपियों को सावधान करना है कि मैया की सोची तिथि या पर्व है भी या नहीं, किन्तु एकादशी न सही, पञ्चमी है तो यह भी तो पर्व है।

ब्रतमयी, आराधनामयी मैया और इसकी आराधना का लक्ष्य एक है। देवता भले बदलते हों, देवताओं के अनुसार उनकी पूजा-पद्धति, पूजा-सामग्री

में भले अन्तर पड़ता हो, प्रार्थना में देवता की महिमा के शब्द बदलते हैं, किन्तु मैया की कामना, मैया की याचना एक ही है। इसमें कभी परिवर्तन नहीं आता-'नीलमणि प्रसन्न रहे। आप उस पर कृपा करो।'

मैया का शरीर कृश होता जा रहा है। इसकी काया क्षण-क्षण छीन हो रही है, किन्तु अदम्य है इसका उत्साह। अथक चलती रहती है इसकी आराधना।

'नीलमणि गोचारण करने गया है।' मैया भले इस भावना में मग्न रहे अथवा-'नीलमणि नहीं है ब्रज में, यह तथ्य भीतर दावानल दहकता रहे, मैया की आराधना थकती-रुकती नहीं। इसके प्राणों की प्यास-'नीलमणि सकुशल रहे।' इसे आराधनामयी बनाये हैं।

उद्धव

वह अंग-गन्ध, वह कान्ति, वह स्वभाव कोई भी कहाँ से पावे? उद्धव आये ब्रज में। ये बृहद्बल श्रीकृष्णचन्द्र के चचेरे भाई ही हैं। श्याम ने अपनी धोती, अपना पटुका, अपनी वनमाला पहिनाकर भेजा। उद्धव भी श्यामवर्ण, विशाल अरुणाभ-लोचन हैं, लेकिन मयूर मुकुटी की शोभा, उसका स्वभाव तो सृष्टि में अन्यत्र सम्भव नहीं है।

देवगुरु बृहस्पिति के साक्षात शिष्य उद्धव बहुत उत्साह से बड़ी आशा से, बहुत गम्भीर होकर ब्रज में आये थे। ब्रज के सरल गोप-गोपियों को समझा देना उन्हें अत्यन्त सरल लगता था। उद्धव यदुकुल के प्रधान मन्त्री की गम्भीरता, गौरव के साथ आये थे। पहिली रात्रि बाबाको उन्होंने उसी गम्भीरता से उपदेश करना प्रारम्भ भी किया था, किन्तु मैया की विह्वलता, मैया के अजस्त्र अश्रु प्रवाह, क्षण-क्षण पर होते इसके विवर्ण मुख को देखकर इससे बोलने का साहस ही उद्धव को नहीं हुआ।

उद्धव तो दूसरे ही दिन बालक बन गये। उनका सब ज्ञान, सब विवेक गोपियों के ही अश्रु-प्रवाह में बह गया। मथुरा के महामन्त्री उद्धव दूसरे दिन सायं नन्दभवन लौटे तो ब्रज के बन गये थे। मैया के चरणों में गिरे। वे भी केवल 'मैया' कह सके।

मैया अनन्त वात्सल्यमयी। इसकी गोद में किसी के लिए भी आश्रय का आभाव नहीं है, किन्तु उद्धव का साहस मैया के सम्मुख पड़ने का नहीं होता था।प्रातः अँधेरा रहते ही निकल जाते थे और रात्रि में अन्धकार हो जाने पर लौटकर मैया की पद-वन्दना करते थे।

उद्धव का सौभाग्य कि उन्हें एक बार श्रीकीर्तिकुमारी के श्रीचरणों के सम्मुख मस्तक रखने का अवसर भी मिल गया। महाभाव की उस घनीभूति मूर्ति के सम्मुख भी पुनः जाने का साहस उद्धव अपने में नहीं पा सके।

उद्धव बचते रहे ब्रज में गोप-बालकों से भी। उन्हें लगता था कि श्रीकृष्ण के सखाओं के समीप पहुँचने पर उनके शरीर के अणु-अणु किसी अतर्क चिद्‌घनाकर्षण से खिंचकर बिखर जायेगा। उद्धव की बुद्धि-विवेक सब उनके सान्निध्य में सत्ता खो बैठते थे।

उद्धव को वात्सल्य मिला बड़े गोपों का, वयस्का गोपियों का और इनके सामीप्य में उद्धव भूल ही गये अपने को। गोप-बालिकाओं ने सम्मान दिया, साथ ही श्यामसुन्दर की प्रीति-दीक्षा दी। उद्धव कृतार्थ हो गये। दो मास पता नहीं लगा कि ब्रज में कैसे व्यतीत हो गये।

'यह अन्ततः नीलमणि ही तो मित्र है।' मैया का उद्धव के सम्बन्ध में अपना समाधान था-'क्या हुआ कि तनिक गम्भीर है, किन्तु उसके समान इसे भी वन की ही पड़ी रहती है। न भोजन का ध्यान, न विश्राम का।'

मैया को उद्धव के रहते समय इनकी भी चिन्ता कम नहीं तंग करती थी-'बड़े सवेरे वन में चला गया। कलेऊ करके भी नहीं गया। अब रात में थक-थकाकर लौटेगा और आते ही सोने लगेगा।'

मैया उद्धव के लिए कलेऊ, छाक भेजने की चिन्ता करती रहती है। श्रीब्रजराज से कहती है-'यह तुम्हारे मित्र का लड़का दो दिन को आया। अब यह गायें चराने जाये, क्या उचित है ऐसा?'

'उद्धव गायें चराने नहीं जाते।' बाबा बार-बार समझाते हैं-'लेकिन उनको कहीं घूमने से रोकना तो उचित नहीं है।'

गायें चराने नहीं जाता तो वन-वन क्यों दिन-भर भटकता है?' मैया को

विश्वास ही नहीं होता कि उद्धव गोचारण करने नहीं जाते होंगे-'यह भी बालकों के साथ नीलमणि के समान गायों के पीछे भटकने का व्यसनी है।'

'यह तो नगर का है। यहीं आकर वन में गये बिना नहीं रह पाता तो नीलमणि नगर में कैसे रहता होगा? कितना उदास रहता होगा?' मैया की चिन्ता उद्धव के आने से बढ़ी ही है।

'श्रीकृष्णचन्द्र यहाँ से चले गये, यही आश्चर्य की बात है।' उद्धव ब्रज आकर इस निश्चय पर आ गये हैं।' उन्हें यहाँ आना ही चाहिए। यहाँ की प्रेम-प्रतिमाओं को त्याग कर उनका कहीं कोई काम नहीं है। मथुरा और मथुरा के लोग नष्ट भी होते हों तो भी उनको यहाँ आना चाहिए। वे आवेंगे, अन्यत्र वे रह नहीं सकते।'

'वे अन्यत्र जाते ही नहीं।' गोप-कुमारियों की यह बात उद्धव नहीं समझ पाते। 'वह गया ही कहाँ है।' उद्धव के लिए गोप-बालकों की बात और अटपटी है।

'उससे कुछ मत कहना। बड़ा संकोची है वह। उसे प्रसन्न रहना चाहिए।' मैया की बात उद्धव थोड़ी समझ पाते हैं-थोड़ी ही, क्योंकि मैया चाहती है कि ब्रज में कोई श्याम के बिना दु:खी भी है, यह कोई कभी उससे न कहे। मैया तो उद्धव के जाने के पीछे भी बहुत दिनों तक स्मरण करती रही-'वह बृहद्बल भी तो फिर नहीं आया। नीलमणि से उसने क्या कहा होगा?'

दाऊ आये

ब्रज में दाऊ आये, द्वारिका से आये। ब्रज आकर अनुभव हुआ कि छोटे भाई को छोड़कर आना अच्छा नहीं हुआ, किन्तु अब तो आ गये। दाऊ के बिना कृष्ण परिपूर्ण नहीं होता, परन्तु कृष्ण के बिना दाऊ तो जैसे शरीर मात्र रह जाते हैं। इनकी आत्मा श्रीकृष्ण, ब्रज की आत्मा श्रीकृष्ण और वह द्वारिका रह गया था।

दाऊ ब्रज आये। ब्रज ने दाऊ का स्वागत किया। हृदय से स्वागत किया, किन्तु ब्रज के जन-जन के अन्तर में जो प्रश्न था-'श्याम नहीं आया? कब

आवेगा?' इसका उत्तर कहाँ था दाऊ के पास। वे भी 'आवेगा ही' तो कह सकते थे, किन्तु उन्हें स्वयं इस उत्तर से सन्तोष हो सकता था?

बड़े गोप, बृद्धाएँ, बाबा का वात्सल्य मिला। सखाओं को अंकमाल दी। गोपकुमारियों ने सलज्ज, ससंकोच प्रणाम किया। कोई कहे भले कुछ नहीं, किन्तु सबके नेत्रों में, सबके रोम-रोम में जो अत्यन्त कातर प्रशन था- दाऊ के प्राण छ्टपटा उठते थे। इस प्रश्न का उत्तर, इस आर्ति को आश्वासन उनके समीप नहीं था।

गोप-कुमारियों का एक वर्ग था-दाऊ की अपनी प्रेयसियों का वर्ग। ये बालिकाएँ बाल्यकाल से ही बहुत मानिनी थीं। इनका निर्णय था-'नन्दनन्दन तो श्री राधा के पीछे पागल हो या है। वह दूसरी किसी से हास परिहास भले कर ले, तनिक उसे छेड़ भले लें, किन्तु राधा के अतिरिक्त इसकी दूसरी कोई प्रिया हो नहीं सकती। अच्छे तो नीलाम्बरधारी बड़े हैं। गम्भीर हैं और जो सम्मुख हो, उसी को समुचित स्नेह देते हैं। उनकी प्रीति प्राप्त हो जाये तो मयूरमुकुटी भी विनीत हो जाता है। वह परिहास, छेड़छाड़ तो करता ही रहेगा और राधा को भी विनम्र रहना पड़ेगा। वह तब स्वामिनी की ठसक नहीं रख़ सकेगी।'

इन लड़कियों ने दाऊ को अपनाया। दाऊ ऐसे परमोदार, ऐसे गम्भीर कि अपने चरणों के समीप पहुँचे का त्याग करना ही इन्हें आता। दाऊ में प्रीति-पक्षपात कैसा। जो जितना दुर्बल, उस पर उतना अधिक दाऊ का स्नेह।

दाऊ आये तो उनके यूथ की लड़कियों में जीवन आ गया। ये वर्षों की वियोग-दग्धा, दाऊ को इन्हें समय देना था और स्वयं भी तो दूसरों के सम्मुख जाकर उदास हो उठते थे। जो श्याम के वियोग में जल रहे हैं, वे ताप, उदासी के अतिरिक्त दे भी क्या सकते थे। उनका आनन्द जब उन्हें त्यागकर दूर जा बैठा, कहाँ पावें वे आनन्द, उल्लास किसी को भी देने के लिए।

'राम उठते ही वन में भागेगा।' मैया के लिए तो राम श्याम में कभी भेद नहीं रहा है। मैया ने दाऊ से चर्चा भी नहीं की श्याम की। यह तो सहज

वात्सल्य-विभोर हो उठी-'चार दिन के लिए आया है और घर में विश्राम करने बैठता नहीं है।'

'बालक का मन बालकों के बिना कैसे लगेगा।' मैया का अपना समाधान है। पुत्र, पौत्रवान होने पर भी दाऊ इसके लिए वे अभी बालक ही हैं-'मुझ बुढ़िया के समीप बैठा रहे तो एक दिन में ही ऊब जायेगा। ब्रज के बालकों को भी तो बहुत दिनों पर उनका सखा मिला है। वे भी इसे छोड़ते नहीं हैं।'

मैया को कौन कहेगा.कि दाऊ सखाओं से भी मिलने में संकोच ही करते हैं और गोपकुमार भी तो कभी इनसे खुलकर खेलने के अभ्यासी नहीं हैं। कन्हाई के बिना दाऊ बहुत गम्भीर हो जाते हैं- मित्रों को भी संकोच हो, इतने गम्भीर। यह तो इनका पुराना स्वभाव है। अत: सखा भी प्रणाम करके गोचारण में ही लग जाया करते हैं।

मैया को उठते ही 'राम को कलेऊ करा देना है वन में जाने से पूर्व।' धुन चढ़ती है। स्वयं दधि-मन्थन करके नवनीत निकालती है। स्वयं रसोई करती है। स्वयं रात्रि में व्यालू कराती है। दाऊ के लिए जो कुछ चाहिए, मैया दूसरे किसी को करने नहीं देती।

'बड़ा भाई आया, छोटा कब आवेगा?' गोपियों में से अनेक पूछती है।'

'इन्हीं दोनों पर तो द्वारिका निर्भर है, पता नहीं कितने शत्रु दाँव लगाये रात-दिन देखते रहते हैं। दोनों एक साथ कैसे आ सकते हैं।' मैया को यह सोचना या जानना नहीं पड़ा। यह उत्साह से कहती है-'राम आ गया है। यह जायेगा तब नीलमणि आवेगा।'

मैया का उत्साह, मैया का दु:ख दाऊ के आने से ऐसे दूर हो गया जैसे कभी था ही नहीं। मैया तो उत्साह में आ गयी। इसे दिन-रात दाऊ की ही धुन रहने लगी है।

दाऊ दो महीने रहकर गये, किन्तु मैया को उत्साह मिल गया-'अब नीलमणि आवेगा।'

'राम पहुँच गया होगा द्वारिका? कितनी दूर है द्वारिका? नीलमणि चल पड़ा होगा?' मैया के प्राणों में यह प्रतीक्षा जाग पड़ी है।

शून्यता

वियोग भी योग की भाँति समाधि देता है। वि+योग। योग से विशेष होने से ही तो इसे वियोग कहा गया है। यम-नियम, आसन, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान के क्रम से साधन करने पर योग में समाधि की उपलब्धि होती है, किन्तु वियोग की तीव्रता प्रत्येक स्थिति में समाधि दे देती है। आप इसे भले भाव-समाधि कह लें।

जाग रहे हैं, निद्रा नहीं है, मनोलय भी नहीं है, परन्तु शरीर का ध्यान नहीं है। किसी इन्द्रिय से कोई सूचना मन ग्रहण नहीं कर रहा है और अपनी ऊहापोह में भी नहीं है। अर्थात मनोराज्य भी नहीं है। इसी अवस्था का नाम समाधि है या और कुछ?

मैया न समाधि जानती और न भावसमाधि। वह तो बैठी-बैठी या खड़े भी अद्भुत शून्यता को प्राप्त हो जाती है। खड़ी हो तो गिर पड़ेगी सूखे काठ के समान यदि सेविकाएँ इसे सम्हाल न लें

'मैं भाग्यहीना हूँ। त्रिभुवन में अलभ्य मणि मैंने पायी थी और उसे खो दिया।' चाहे जब मैया का श्रीमुख श्वेत पड़ जाता है। शरीर में जैसे एक बूँद भी रक्त न हो। बैठी हो या खड़ी, नेत्र पथराने लगते हैं। संज्ञा लुप्त हो जाती है।

सेविकाएँ भागती हैं श्रीव्रजराज को बुलाने। इतनी ही विपत्ति नहीं है। चाहे जब मैया का सिंदूर-विनिन्दक अंग नीला पड़ने लगता है। रक्तहीन, शुष्क, काला पड़ जाता है सम्पूर्ण शरीर। जैसे अग्नि में अधजला काष्ठ हो।

'नीलमणि नहीं है। वह मेरे अत्याचारों से दु:खी होकर चला गया। मैंने उसे कितना-कितना डाँटा। मैं गर्व में फूली उस पर प्रतिबन्ध लगाती ही चली गयी। यहाँ मत जा, वहाँ मत जा, यह मत कर, वह मत कर, ऐसे रह, वैसे रह! फूट गया मेरा भाग्य।' मैया में जब ऐसा कोई मनोवेग उमड़ता है, वेदना की कोई सीमा रह जाती है।

'मैं कितनी इतरा उठी थी।मुझे क्या पता था कि नीलमणि मेरा नहीं है।'

मैया का हृदय इसको सह नहीं सकता। यह छटपटाकर संज्ञाशून्य हो जाती है।

'महर! नीलमणि आवेगा। वह हमारा ही है, किन्तु वह तुम्हें इस अवस्था में देखे, यह चाहती हो?' बाबा के समीप कहने को यही है।

'वह आ रहा है? आ रहा है मेरा नीलमणि!' मैया का शरीर पार्थिव है, यह समझने वाला बहुत भ्रम में रहेगा। पार्थिव शरीर क्षण में ऐसा रक्तमांसहीन कंकाल और क्षण में सुन्दर, सुपुष्ट होता रह सकता है?

'नीलमणि! नीलमणि, कहाँ है?' चाहे जब मैया का शरीर पीपल के पत्ते के समान काँपने लगता है। नेत्र तो इसके कदाचित ही सूखते हैं। रोम-रोम से वारिधारा ही नहीं, रक्तस्त्राव तक होने लगता है और जब शरीर का कम्प रुकता है, इसे हिलाते रहो, संज्ञा का नाम नहीं। नेत्र खुले हैं, किन्तु कुछ देखते नहीं हैं।

गोपियाँ व्याकुल होकर इधर-उधर दौड़ती हैं। श्यामसुन्दर का पटुका, वंशी, मयूरपिच्छ जैसा कुछ ले आती है। सामने करती हैं-'ब्रजेश्वरी! यह क्या है? इसे पहिचानती हो?'

मैया अपने लाल के वस्त्र, वंशी, आभरण नहीं पहिचानेगी? वह झपट लेती है और दोनों करों से हृदय से दबा लेती है-'नीलमणि!'

मैया फिर भी चेतना-शून्य हो जाती है। प्राय: ऐसे समय इसकी शून्यता दूसरों को कम आशंकित करती है। अश्रु-प्रवाह नेत्र के कोनों से चलने लगता है। शरीर से स्वेदधारा भी चलती है, कम्प भी होता है। लेकिन रोम-रोम उत्थित हो जाता है। देह से जैसे प्रकाश की किरणें फूटने लगती हैं। बहुत बढ़ जाती है अंगकान्ति। कभी-कभी मुख की ज्योति इतनी बढ़ जाती है कि इसकी ओर देखा नहीं जाता। वैसे तब भी संज्ञा शून्य ही रहती है।

'ब्रजेश्वरी।' सेविकाएँ, गोपियाँ भी चकित देखती रह जाती हैं। इस अवस्था में मैया को स्पर्श करना, हिलाना, पुकारना कुछ सम्भव नहीं होता। गोपियों को लगता है कि मैया में कोई देवी आविष्ट हो गयी हैं। वे हाथ जोड़ती हैं, भूमि पर मस्तक रखकर प्रणाम करती हैं। इन सबको कौन समझाये कि मैया से बड़ी कोई देवी कहीं है ही नहीं। यह स्वयं महाशक्ति है।

मैया की शून्यता कितनी देर रहेगी, कोई कह नहीं सकता। कभी बहुत देर भी होती है। तब गोपियाँ इसके चारों ओर एकत्र हो जाती हैं और ताली बजा-बजाकर गाने लगती हैं-

'नीलमणि श्यामसुन्दर गोपाल गोविन्द!'

यह कीर्तन मैया को सचेत करता है। बहुत धीरे-धीरे संज्ञा लौटती है। इधर-उधर देखेगी और शिथिल स्वर में पूछेगी-'नीलमणि गोचारण करने गया?' मुझे क्या हो गया था? तुम सबने जगाया क्यों नहीं? वह कलेऊ कर गया?'

हास्य

वियोग और हास्य? वेदना में हँसी? समझ में आता है कुछ? समझ में आवे या न आवे, किन्तु मैया हँसती है, अनेक बार हँसती है। विचित्र हँसी हँसती है। हँसने लगेगी तो देर तक हँसती ही रहेगी।

मैया का स्वभाव कभी खुलकर हँसने का है नहीं। यह तो केवल मुस्कराती है, किन्तु यदि कभी हँस पड़े, लगता है कि चाँदी की घंटियाँ बज उठी हैं। मैया की दन्तपंक्ति की किरणों से उस समय इसके लाल पतले अधर दुग्धोज्वल हो उठते हैं। अनेक बार शैशव में कन्हाई इसे इसलिए गुदगुदाता था कि इसकी मधुर हास्य-ध्वनि सुनने को मिले।

गोपियाँ कहती हैं-'श्यामसुन्दर को माता-पिता से रूप-रंग कुछ नहीं मिला है, किन्तु हँसी इन्हें अपनी माता की मिली है। ब्रजेश्वरी जैसी ही मधुर हास्य-ध्वनि और वही दन्तकान्ति।'

मैया को अपने लाल की कोई बात स्मरण आती हो और यह हँसती हो, ऐसी बात नहीं है। यह तो ऐसी बातें सोचकर हँसने लगती है कि इसका हास्य इसके रुदन से अधिक आशंकाप्रद हो गया है।

'क्यों री! मैं ऐसे ही मर जाऊँ तो भूतनी बनूँगी? सुना है कि जिसका मन यहीं किसी में लगा रहता है, वह मरकर भूत बनता है।' मैया एक गोपी से पूछ रही है-'नीलमणि मुझसे डरेगा तो नहीं?'

'आप यह सब क्या सोचने लगी हैं?' गोपी कातर होकर कहती है।

'मैं अपने नीलमणि को डराऊँगी नहीं।' मैया हँसने लगी है–'मैं उसका स्पर्श भी नहीं करूँगी। भूतनी के स्पर्श से तो अनिष्ट होता है, किन्तु मैं भूतनी बनूँगी।'

भगवान भूतनाथ के मुख्यगणों में भी कोई ऐसे नहीं हैं जो मैया की छाया भी छू सकें, सामान्य भूतप्रेत की चर्चा व्यर्थ है। मैया का कोई स्मरण करेगा और वहाँ भूत-प्रेत टिकेगा? मैया भूतनी हो तो ब्रह्मा की सृष्टि मर्यादा बनी रहेगी? लेकिन मैया यह सब सुनने-समझने की स्थिति में नहीं है।

'मैंने मुनियों में अनेक से सुना है कि आपके लाल का स्मरण करते जो शरीर छोड़ता है, वह उनके लोक जाता है।' गोपी बेचारी समझाना चाहती है।

'उसका लोक क्या? वह कहीं द्वारिका में ही तो है।' मैया हँस रही है–'मैं भूतनी होकर उसके समीप ही जाना चाहती हूँ।'

'नीलमणि चलेगा तो मैं उसका पथ बुहार दिया करूँगी। कोई मुझे नहीं देखेगा।' मैया अपनी धुन में है–'वह धूप में निकलेगा तो मेघ बनकर उस पर छाया किये चलूँगी। वह सो जायेगा तो उसे व्यजन करूँगी। मैं उसे देखती रहूँगी-देखती रहूँगी, पर वह मुझे नहीं देखेगा। मैं उसके लिए तनिक भी बाधा नहीं बनूँगी।'

'मैं उसके आँगन में कोकिल बनकर कूकूँगी। मैना बनकर 'नीलमणि' कहकर उसे पुकारूँगी।' मैया हँसे जा रही है। इसे अपने लाल के सान्निध्य में भूतनी बनकर पहुँच जाने की कल्पना बहुत विचित्र, बहुत सुखद लगती है।

'मैं नीलमणि को स्पर्श नहीं कर सकूँगी? नहीं, स्पर्श तो नहीं करूँगी।' मैया तनिक गम्भीर दीखने लगती है–'भूतनी उसे कैसे स्पर्श करेगी?'

'मैं उसे देख सकूँगी। देखती रहूँगी और वह मुझे नहीं देखेगा। वह अपने काम में लगा रहेगा।' मैया फिर हँसने लगती है–'उसे पता भी नहीं लगेगा कि उसकी मैया उसके समीप ही है।'

'वे सुनेंगे कि आपने उनके वियोग में देह त्याग दिया, तब?' सबके समीप मैया को सावधान करने की यही बात है।

'कौन कहेगा उससे? द्वारिका तो सुना बहुत दूर है।' मैया जैसे कुछ सोचने लगती है-'भूत-प्रेतों को तो दूर जाने में श्रम नहीं होता? मुझे कौन सा वहाँ जाकर फिर यहाँ लौटना है। मुझे कोई ऐसी अकेली नहीं जाने देता। कोई मुझे मेरे लाल तक ले नहीं जाता। मैं मरकर भूतनी बनूँगी, तब मुझे कोई रोक नहीं सकेगा।'

'मैं नीलमणि के समीप जाऊँगी। कोई मुझे रोक नहीं सकेगा।' मैया हँस रही है, हँसे जा रही है। रुदन से भी भयानक यह इसकी हँसी-गोपियाँ, सेविकाएँ स्तब्ध, भीत, शंकित हैं। समझ नहीं पाती हैं कि वे अपनी इन स्वामिनी को कैसे सावधान करें। ब्रजेश्वर को बुलाये बिना उपाय नहीं।

'महर! तुम मुझे छोड़कर चली जाओगी?' बाबा भरे कण्ठ कहते हैं।

'महर! इस ब्रज में धरा क्या है? तुम भी चलो।' मैया हँस रही है-'हम नीलमणि के पास जायेंगे। हम दोनों मरकर भूत-भुतनी बनकर उसके पास चलेंगे।'

'लेकिन महर! वह आवेगा-आवेगा ही यहाँ।' बाबा अपना अमोघमन्त्र दुहराते हैं-'और सुनेगा कि मेरे वियोग में मेरे बाबा और मैया रो-रोकर, तड़प-तड़पकर मर गये, तब क्या दशा होगी उसकी?'

'नहीं! नहीं! नहीं!' मैया चीत्कार कर उठती है। इसका हास्य बिदा हो जाता है।

गायन

विवाह करेगा, विवाह करेगा।
गोपाल लाल मोहन विवाह करेगा।।
वृषभानुनन्दिनी-सी बहू अहा, वरेगा।
कीर्तिरानी मोहन की मनुहार करेंगी।।
मेरी बहू की सखियाँ मेरा आँगन भरेंगी।
सुख, शोभा, सैन्दर्य सभी से गेह भरेगा।
मेरा लाल मनोरथ मेरे पूरा करेगा।

पैर छुएगी दोनों कर में आँचल लेकर राधा।
जुगजुग जीए मोहन मेरा मुझे कौन सी बाधा।
साध मेरी सब जीवन की पूरी करेगा।
गोपाल लाल मोहन, विवाह करेगा।।

मैया ताली बजा-बजाकर गा रही है। इतनी आनन्द मग्न गारही है कि जैसे अभी उठकर नाचने लगेगी। गोपियों को आश्चर्य नहीं है, किन्तु वे सब जान-बूझकर तनिक दूर हट गयी हैं। सब जानती हैं कि ब्रजेश्वरी इस समय ऐसा समझती हैं कि उनका लाल वन में गोचारण करने गया है।

'इतनी उमंग, इतनी अभिलाषा और विधाता ने कितनी निष्ठुरता की इनके साथ।' गोपियाँ छिपाकर आँसू पोंछती है। जानती है कि उनकी स्वामिनी की यह उमंग देर तक नहीं टिक सकती। अभी क्रूर विधाता कोई निमित्त भेज देगा और जब इन्हें स्मरण आवेगा कि इनके गोपाल लाल मोहन तो ब्रज में ही नहीं है, इस उमंग के मग्न होने की व्यथा कितनी दारुण होगी।

'बेचारी वृषभानु-नन्दिनी!' गोपियों में चर्चा चल पड़ती है-'इस घर में बहू होकर आने की कितनी आशा, कितनी उमंग थी उसमें। वह भुवन सुन्दर, कुसुम-कोमल भोली बालिका। श्यामसुन्दर कितना सम्मान करते थे उसका। अब उसकी ओर देखा नहीं जाता। वह तो कमल-पत्र पर की बूँद हो रही है, अब ढुलकी तब ढुलकी। उससे कीर्ति रानी तक आश्वासन के भी दो शब्द नहीं कह पातीं। कहीं उसकी कोई सखी आ जाये इतने में?'

गोपियों को यह आशंका कम्पित कर देती है। बरसाने की बालिकाएँ भी व्याकुल होने पर इन ब्रजेश्वरी के अंक में ही तो मुख छिपाकर रुदन करने भागती है। इनका यह उमंग-संगीत सुनकर उनका हृदय फटे बिना रहेगा? इस गायन की तनिक चर्चा कीर्ति-कुमारी के कानों में पड़ जाये तो प्राण बचेंगे उनके?

मैया को रोका भी नहीं जा सकता। इतना निर्दय कोई कैसे होगा कि इस दु:खिया का यह चार क्षण का मानसिक सुख भी इससे छीन ले।

मैया गाती है। ऐसे ही किसी मनोभ्रम की उमंग में गाती है। तब तक

गाती है–जब तक निर्दय नियति इसे उस मनोभ्रम से सचेत न कर दे।

अपने ही तकिये पर झीना दुकूल डालकर उसे अंक से सटाये, अथवा उससे सटी बैठी, उसे थपकाते, उसे अपना नन्हा पुत्र समझकर मैया अनेक बार उसे सुलाने का प्रयत्न करती लोरी गाती है–

'सोजा! सोजा मेरे मुन्ने, मेरे! कुँवर कन्हाई सो जा।
अरे, जुन्हैया मेरे आँगन तुझे सुलाने आयी।।
चिड़िया सोयीं, मोर सो गए, सोए सभी कबूतर।
मैया सोयी-बछड़े सोये, सोये तरु पर बन्दर।।
आ जा, आ जा, निंदियारानी मोहन तुझे बुलाता।
तू आयी क्या? लाल को मेरे आयी अहो जम्हाई।।
मेरा श्याम सो रहा अपनी सुन्दर पलकें मूँदे।
पंखा झल दूँ, झलकीं मुख पर नन्हीं नन्हीं बूँदें।।
मैंने त्रिभुवन की निधि पाई।
मेरे सोजा कुँवर कन्हाई।।

मैया का वीणा-विनिन्दक स्वर, इसका यह तन्मय होकर पुलकित गायन। यही स्वर, यही गायन है कि इसके आरम्भ होते ही आकाश में उड़ते पक्षी तक मैया के आँगन में उतर आते थे। दूर कूदते, खेलते बन्दर सब छोड़कर दौड़ आते थे। गोपियों का ही नहीं, पशु-पक्षियों तक का ठट्ट लग जाता था मैया के आँगन में। सब नीरव, सब निस्पन्द, सब तन्मय। जैसे सब मूर्तियाँ हों। मैया अपने गायन से सचेत होती थी तो अपने आँगन की भीड़ देखकर मुस्करा उठती थी। गोपियों से पूछती थी कि वे क्यों आयी हैं। पशु-पक्षियों को, बन्दरों को कुछ आहार देने को उठाती-'तुम सबों को भूख लगी है? तुम बोलकर क्यों नहीं माँगते।'

'हम और ये सब भी आपका गीत सुनने आये हैं।' कोई भी गोपी कह देती थी।

'चल! बन्दर और पक्षी गीत सुनते होंगे।' मैया को यह भी नहीं लगता था कि गोपियाँ भी सचमुच उसका गायन सुनने आयीं हैं। मैया दूसरे के

लिए कभी कहाँ गाती है। यह तो कहती है-'मुझे कहाँ गाना आता है। मैं तो यों ही गुनगुना रही थी।'

अब वही स्वर, वही कण्ठ, वही संगीत, किन्तु गोपियाँ अश्रु पोंछती हैं। पक्षी उड़ना त्याग कर पंखों में मुख दुबका लेते हैं। बन्दर तक मुख लटकाकर बैठ जाते हैं। लताएँ आँसू के समान पुष्प, पत्ते गिराने लगती हैं। लेकिन मैया को कोई टोकने का साहस नहीं कर पाता। इस दुखिया का यह दो क्षण का सुख...।

अनुभूति

'वह रहा-वह रहा नीलमणि।' मैया कभी भी घिरे मेघों में बिजली चमकने पर पुकार उठती है-'वह उसका पीतपट चमका। वह मेघों की ओट में छिपा मेरा लाल झाँक रहा है।'

नीलमणि! आजा लाल! तू मथुरा जाकर जादूगर बन गया है?' मैया पुचकारती है-'मेरे पास आजा! यह मैया तो तेरे पास इन मेघों तक नहीं आ सकती।'

'भद्र है।' कभी कुछ क्षण, कभी थोड़ी देर ऐसे ही पुचकारेगी-बुलायेगी और फिर नेत्र बन्द करके बैठ जाएगी। तब अपने हाथ अपने नेत्रों के पास ऐसे ले जाकर मुट्ठी बन्द कर लेगी, जैसे कन्हाई ने पीछे से आकर मैया की पीठ से चिपक कर अपनी हथेलियों से इसके नेत्र बन्द किये हों और यह श्याम के दोनों हाथ पकड़कर जानबूझकर दूसरे बालकों के नाम एक-एक करके ले रही हो-'तोक है, विशाल है, अंशु है, अर्जुन है।'

'इनमें कोई नहीं है? दाऊ है?' मैया हँसती है धीरे-धीरे-'उहूँ? कोई नहीं है, तब बन्दर है।'

देर तक इस उमंग में रहेगी। यह सर्वथा कल्पित उमंग है, ऐसा कहना कठिन है, क्योंकि अभी उस दिन मैया ने सोकर उठते ही पुकारा-'अरी कौन है? यहाँ तो आओ।'

कई सेविकाएँ दौड़ी आयीं। मैया ने सबसे कहा-'मेरी शैया के वस्त्र

सूँघकर देखो तो सही। सब फिर कहोगी कि मैं स्वप्न देख रही थी। नीलमणि अभी मेरे रोकते-रोकते भी बाबा के पास गोष्ठ में भाग गया है। रात्रि में तो मैया के बिना उसे नींद नहीं आती।'

मैया की शैया के वस्त्र सूँघने की किसी को आवश्यकता नहीं है। यह गन्ध भी क्या त्रिभुवन में छिपती है। यह तुलसी-मिश्रित नीलकमल-सी विचित्र दिव्य गन्ध-श्यामसुन्दर के श्रीअंग की इस गन्ध को भी क्या पहिचानना है? गोपियाँ, सेविकाएँ केवल चकित देखती रह जाती है। किसी के समीप इसका कोई समाधान नहीं है।

इससे भी अद्‌भुत चकित करने की बात-मैया पुकार रही है, पुचकार रही है-'नीलमणि! मेरे लाल! डर मत। भाग मत। मैं तुझे मारूँगी नहीं। तुझे नहीं बाँधूँगी। कुछ नहीं कहूँगी तुझे। क्या हुआ जो दही फैल गया। तू भूखा है। कलेऊ कर ले लाल।'

कक्ष में दही फैला पड़ा है और दही में भीगे नन्हें चरणों के चिह्न द्वार तक चले गये हैं। ये ब्रज, ध्वज अंकुश, यब, पद्म के चिह्न और किसी बालक के ब्रज में हैं? संसार में किसी और चरणों में सुने गये हैं? इन चिह्नों को मैया ने कल्पना से तो नहीं बनाया होगा। मैया इन चिह्नों के सम्बन्ध में जो कहती है, वह कोई समझ में आने की बात है।

'मैं दधि-मन्थन करते करते तनिक दूध देखने चली गयी थी। मुझे क्या पता था कि नीलमणि इतने में जाग जायेगा। उसे तो मैं सोता छोड़कर उठी थी। वह उठकर आया होगा।' मैया को कुछ अद्‌भुत नहीं लगता-'इतने बड़े मटके में उझक कर माखन देखने लगा होगा। चपल तो है ही, हाथ डालता होगा। मटका उलट गया। अब डरकर भाग गया है।'

यहीं तक बात तो नहीं है। मैया हठ कर रही है-'मैं जाऊँगी तो वह और भागेगा। अभी उसके मुख में न दूध की घूँट गयी, न तनिक माखन। भूखा है। उसे तुम सब ढूँढ़ लाओ।'

जन्म-जन्म के योग-साधन से, युगों तक की घोर तपस्या से योगी, तपस्वी जिसे ढूँढ नहीं पाते, उसे बेचारी गोपियाँ कहाँ ढूँढ़े? वह स्वयं मिलना

चाहे तो समीप ही है और स्वयं न मिलना चाहे तो श्रुति भी उसे ढूँढ़ पाती है?

दूसरा सत्य यह भी तो है कि जो सचमुच प्रेम से चाहता है, पुकारता है, उससे कन्हाई दूर रह नहीं पाता। मैया से अधिक प्रीति, अधिक पिपासा-पूर्ण हृदय सृष्टि में कोई कहाँ से पावेगा? ऐसी अवस्था में कृष्ण चाहे तो भी इससे दूर रह सकता है?

अनेक दिन प्रात: मैया बैठी मुस्कराती है। अपने केशों में लिपटी मोटी वनमाला धीरे-धीरे सुलझाती निकालती है-'बड़ा चपल है नीलमणि। कल गोचारण से लौटा तो अपनी वनमाला मेरी वेणी में उलझा दी। मैं जब निकालना चाहती थी, मेरे दोनों हाथ पकड़ लेता था। वह तो सवेरे गायों के पीछे चला गया। यह माला ऐसी उलझा दी है कि निकलती ही नहीं है।

वनमाला कन्हाई की ही है, इसमें दो मत होने सम्भव नहीं हैं। अत: मैया का सत्य...।

उपसंहार

वनमाला के विषम वियोग ने मैया को उन्मादिनी बना दिया है। मैया सोते-जागते, प्रभात-मध्यान्ह, सायं तथा रात्रि में भी अपने नीलमणि की धुन में ही निमग्न रहा करती है।

बाबा से, गोपों से, गोपियों से, सब से मैया का अत्यन्त दीन अनुरोध चलता ही रहता है-'मेरा नीलमणि खो गया है। उसे ढूँढ़कर ला दो। मैं उसके बिना मणिहीना सर्पिणी हो रही हूँ। मुझे ही कोई उसके समीप पहुँचा दो।'

मैया ने कभी जाना नहीं कि वह ब्रजेश्वरी है। इसमें प्रभुत्व का स्वर कभी प्रकट नहीं हुआ, किन्तु कन्हाई के वियोग ने तो इसे कंगालिनी बना दिया है। सेवकों तक से गिड़गिड़ाती रहती है।

मैया कितनी भी उन्मादिनी हो, यही आश्चर्य है ब्रज के सब बालकों, बालिकाओं की और अतिथियों, ऋषि-मुनियों ब्राह्मणों की सेवा-सत्कार में इससे किञ्चित् भी त्रुटि नहीं हो सकती।

ऋषि-मुनि आते ही रहते हैं। अतिथ कोई इधर से निकलेगा, उसे सीधे ब्रजराज की पौरि पूछते आना है। मैया को सबसे अपने नीलमणि के लिए आशीर्वाद चाहिए और आशीर्वाद तो उत्तम सत्कार करके ही पाया जा सकता है।

चातुर्मास में अतिथि नहीं आते, किन्तु तब ब्रज में आकर चातुर्मास करने वाले महात्माओं का समुदाय होता है। दूसरे दिनों में ऐसा कोई ही अन्धड़-वर्षा का दुर्दिन होता है, जब बाबा के यहाँ कोई अतिथि न आवे। मैया को सदा व्यस्त रहना है इस सत्कार में।

ब्रज में सहस्त्रश: बालक हैं। नन्दब्रज की ही नहीं, दूसरे गाँवों की भी बालिकाएँ हैं। न बालकों को न बालिकाओं को समूह बनाकर आना है। वियोग-व्याकुल व्यक्ति एकान्त चाहता है या समूह बनाता है। अतिथि-अभ्यागत के सत्कार में व्यस्त न हो तो रात्रि में भी अनेक बार कोई बालक या बालिका इसके अंक में सिसकती सोती रहे, यह साधारण बात है। दिन में तो यह कई-कई बच्चों को सम्हालती ही रहती है एक साथ।

ये बालक-बालिकाएँ अन्तत: क्यों रोते हैं? क्यों व्याकुल होते हैं, यह भी क्या कहने-पूछने की बात है। इनके अतिरिक्त भी कम निमित्त कहाँ हैं जो मैया को अपने नीलमणि का स्मरण दिलाते हैं। नीलमणि नहीं हैं, यह स्मरण दिलाते हैं। आँधी आवेगी, पानी आवेगा, शीत या गर्मी पड़ेगी। इसे कोई रोका जा सकता है?

गायें हैं, बछड़े-बछड़ियाँ हैं, कुत्ते, बिल्लियाँ, बन्दर, मयूर, कपोत, काक हैं। पता नहीं कितने पशु-पक्षी हैं। इन्हें श्रीब्रजराज के आँगन में ही मँडराते रहना है। बार-बार भाग आना है। इन सबको ब्रज से बाहर भगा देने की बात कोई सोच सकता है? मैया को तो ये सब इसके नीलमणि का स्मरण कराते हैं।

गोपराज का सदन है। इसमें दूध, दही माखन तो भरा ही रहेगा। रस्सियाँ इधर-उधर पड़ी ही रहेंगी। ऊखल को उठाकर कहीं फेंका जा नहीं सकता। घर में ही अभी धरी है श्याम की वंशी, अनेक पटुके मोहन के मैया ने

सम्हाल कर रखे हैं। मयूरपिच्छ तो ब्रज में वृक्षों के नीचे भी मिल जाते हैं। यह तो ब्रजेश्वर का सदन है।

यह सब न भी हो तो ऐसी कोई वस्तु है ब्रज में जिसको देखकर श्याम का स्मरण न हो? यहाँ की एक-एक वस्तु में, तृण पत्ते में तो उस नील सुन्दर का स्पर्श बसा है। एक-एक प्राणी उसका अपना है। पशु पक्षी ही नहीं, कीट भृंग, तितलियाँ तक उसका स्मरण कराती हैं। मैया की दृष्टि जिधर उठेगी, उसे अपने लाल का स्मरण कराने वाली ही वस्तुएँ तो मिलती हैं।

'आपके लाल कहाँ हैं?' ब्रज का कण-कण, ब्रजराज का अणु-अणु, वायु का प्रत्येक झोंका, सूर्यचन्द्र की एक-एक किरणें मैया से यही तो पूछती लगती है।'

महीने में एक दिन मोहन का जन्म-नक्षत्र आता है, किन्तु किसी न किसी बालक का जन्म नक्षत्र प्रति दिन पड़ जाता है। वर्ष गाँठ पड़ती है बालकों की और पर्व-उत्सव पड़ते ही रहते हैं। पदार्थ का अणु-अणु जैसे कृष्ण का स्मारक है, काल के भी क्षण-क्षण पर उसी श्याम की छाप है। मैया को अपने नीलमणि का स्मरण तो उसका अपना ही शरीर दिलाता रहता है।

असंख्य अवसर हैं, असंख्य पदार्थ हैं। कहना यह उचित है कि कोई अवसर, कोई पदार्थ ऐसा नहीं जो मैया को उसके नीलमणि का स्मरण न कराता हो। सारी सृष्टि इसी में लगी है। अवसरों और पदार्थों में होड़ लगी है मैया को स्मरण कराने की। जैसे सब ठेलम-ठेल कर रहे हों कि कौन कितना स्मरण करा पाता है-'हम, हम, हम।'

अब इस 'हम, हम, हम' की ठेलम-ठेल में जो असंख्य क्षण, कण, प्राणी, पदार्थ गड़बड़ हो रहे हैं, उनके कारण मैया की स्थिति प्रतिक्षण ही परिवर्तित होती रहती है। अगले क्षण यह कैसी रहेगी, कोई किसी प्रकार अनुमान नहीं कर सकता। इसकी इन क्षण-क्षण परिवर्तित होने वाली विचित्र लोकातीत अवस्थाओं का वर्णन सम्भव नहीं है।

अपने नीलमणि के वियोग में विक्षिप्त मैया के अन्त स्ताप की तुलना नहीं है। यह ताप इसे क्षण-भर में इतना कृश, इतना कंकाल प्राय, इतना अवश कर देता है कि सृष्टि में कोई प्राणी इस प्रकार भी जला, झुलसा, श्वास के वेग से उड़ता जैसा होकर भी जीवित रह सकता है, यही समझ पाना सरल नहीं है। इस विषम दावानल से क्षण क्षण दग्ध होती मैया हाय!

कुशल यही है कि इस असह्य स्थिति ने मैया को अद्‌भुत विस्मृति दे दी है। यह विस्मृति का ही प्रसाद है कि इसके जीवन में उल्लास के भी क्षण आते हैं। ये क्षण अमृत हैं। यही मैया को जीवित कर जाते हैं। इनके कारण ही इसका भुवन-मंगल शरीर पुनः-पुनः स्वस्थ हरा हो जाया करता है।

मैया हँसती है, गाती है, प्रसन्न होती है इस विस्मृति के कारण। विस्मृति इसका जीवन बन गयी है, अतः स्वाभाविक हो गयी है विस्मृति। कठिनाई यह है कि वियोग का स्मरण दिलाने वाले निमित्त असंख्य हैं। ये निमित्त एक साथ बहुत अधिक उपस्थित ही रहते हैं। इनकी भीड़ में भी मैया की विस्मृति बलवान हो जाती है, यही अदभुत बात है। ये निमित्त न हों, मैया को स्मरण ही न आवे कि उसका लाल ब्रज से कहीं बाहर भी गया है।

विचित्र विस्मृति है-स्थायी स्वाभाविक जीवन का सहज रूप बन गयी विस्मृति। इतनी प्रगाढ़ विस्मृति कि मैया को अपने पुत्र की बय भी विस्मृत हो जाती है। सायं काल से तो मैया को धुन चढ़ी रहेगी-'नीलमणि गोचारण करके आया तो सखाओं के साथ खेल में लग गया। वह ब्यारी करना ही भूल गया।'

इतने में भूल जायेगी स्वयं कि श्याम सुन्दर घर में आया भी या नहीं। शयन से पूर्व कई बार स्वयं कहेगी-'नीलमणि बड़ा हो गया है। अब अपने बाबा के समीप सोता है, यह तो ठीक है, किन्तु ब्यारी करके दो क्षण भी तो नहीं टिकता। दिन भर गायों के पीछे भटकता है। थका आता है। सो जाने की शीघ्रता रहती है इसे।'

यह भी टिकने वाले भावों में नहीं है। अपनी शैया-पर लेटते ही पता नहीं कब कैसे मैया अपने ही तकिये को गोद में खींचकर झीना पीतपट उढ़ा

देगी। उसे थपकने लगेगी। लोरी सुनाने लगेगी। इसे यही लगेगा कि इसका लाल ही इसके अंक में सो रहा है और अभी तो वह नन्हा-मुन्ना है। अभी इसका दूध पीता-पीता सो गया है।

'नीलमणि उठते ही नवनीत के लिए मचलेगा।' मैया ब्रह्ममुहूर्त से भी पहले उठकर दधि-मन्थन करने लग जाती है। रात्रि में भी इसे यही चिन्ता लगी रहती है। दधि-मन्थन के बीच-बीच में भी अपनी शैया की ओर झाँक लेती है कि इसका नटखट्ट लाल जाग गया या नहीं।

'पता नहीं महर को इतनी क्या शीघ्रता रहती है।' दधि-मन्थन कब अधूरा छोड़कर खीझती बैठ जायेगी, कोई ठिकाना नहीं-'अँधेरे ही कहीं इतने सुकुमार बालक को यमुना-स्नान कराने ले जाया जाता है। अब लौटते ही उसे गोदोहन की धुन चढ़गी और तब क्या कलेऊ करेगा? फिर तो मुँह जूठा करके गोचारण को चल देगा।'

इसकी विस्मृति कभी इसके कुमार को अबोध शिशु सुझाती है, कभी डेढ़-दो वर्ष का, जिसे यह गोष्ठ में, यमुना पुलिन पर ढूँढती भटकती है और कभी बछड़े या गायें चराने वाला।

यह विस्मृति का ही वैभव है, ऐसा भी निश्चयपूर्वक कह पाना कठिन है। मैया की शैय्या के वस्त्रों से प्रात: जो सुरभि आती रहती है, इसके कक्ष में, प्रांगण में जो चाहे जब नन्हें पद-चिह्न देखने में आते हैं, इसके केशों में जो कभी वनमाला और कभी वन के सुरंग-सुमन उलझाये मिलते हैं, यह सब इसकी विस्मृति कैसे कर सकती है? कन्हाई की अंग-गन्ध, वनमाला, पद-चिह्न ऐसे हैं कि कोई देवता या असुर माया से इनको दो क्षण को भी प्रकट कर सके? इनके चिन्तन से महामाया का व्यामोह भी मिट जाया करता है।

मैया की स्थिति, मैया का स्वभाव, मैया के समीप प्रकट होते रहने वाले श्याम के ये चिन्ह-बुद्धि इसे समझ नहीं पाती। ग्रन्थों में लिखा है कि ब्रह्म अनिर्वचनीय है, माया अनिर्वचनीय है। ऋषि-मुनि कहते हैं कि कृष्ण का वैभव और स्वरूप अनिर्वचनीय है। तब कृष्ण-जननी का ही स्वरूप और

वैभव बुद्धि में, मन में, वाणी में आ जायेगा, इसकी आशा क्यों की जाये।

एक बात अवश्य है। कन्हाई के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता कि वह कब क्या करेगा, किन्तु एक पक्की बात कहीं जा सकती है कि यदि उसका कोई आश्रित, कोई अपना किसी कष्ट में होगा, कहीं उसका पक्ष लेने की आवश्यकता होगी तो कृष्ण उसी के साथ खड़ा मिलेगा। श्याम ऐसे समय दूसरे का कोई तर्क न सुनेगा और न कोई औचित्य-अनौचित्य देख सकेगा।

मैया के सम्बन्ध में भी एक बात पक्की ही कही जा सकती है कि मैया का साकार शरीर केवल वात्सल्य से बना है। इसके शरीर में दूसरा कोई तत्त्व नाम को भी नहीं है। यह वात्सल्य का धनीभाव है। अत: कोई शिशु, कोई बालक चाहे जब इसके अंक में आकर बैठने-हँसने या रोने को स्वतन्त्र है। इसका अंक शिशु को स्वत्व है। इससे किसी को भी केवल स्नेह-वात्सल्य ही मिल सकता है।

मैया से आशीर्वाद माँगना नहीं पड़ता। यह तो आशीर्वाद की वर्षा करती ही रहती है। इसे प्रणाम करके भी लगता है कि अपने से दूर ही किया जा रहा है। अत: इसके समीप सटकर बैठकर इसके लाल-लाल कोमल चरणों को क्रीड़ा-पूर्वक देखने के लिए स्पर्श किया जा सकता है।

'तू क्या कर रहा है?' मैया हँसकर पूछेगी? मैया के नूपुरों से खेलते पदनखों को अपनी अँगुली से छू-छूकर गिनने अथवा चरण तल की रेखाओं पर अँगुली फिराते कहा जा सकता है-'तेरे चरण देख रहा हूँ।

मन से ही यह कर देखें हम सब।

॥ इति ॥

ग्रंथ सूची

1. शत्रुघ्न कुमार की आत्मकथा
2. आञ्जनेय की आत्मकथा
3. सांस्कृतिक कहानियाँ - भाग-1 से 6
4. सांस्कृतिक कहानियाँ - भाग-7 से 12
5. पार्थ सारथी
6. भगवान वासुदेव
7. द्वारिकाधीश
8. नन्दनन्दन
9. कर्म रहस्य
10. रामचरित पूर्व खण्ड
11. रामचरित उत्तर खण्ड
12. राम श्याम की झांकी
13. पलक झपकते
14. आपकी चर्या
15. कन्हाई
16. साध्य और साधन
17. चिन्तन चिन्तामणि (गीता चिन्तन सहित)
18. शिव चरित्र
19. शिव स्मरण
20. श्याम का स्वभाव
21. हिन्दुओं के तीर्थस्थान
22. श्रीचक्रचरितम्
23. उन्मादिनी यशोदा
24. प्रभू आवत
25. वे मिलेंगे
26. मानस के अनुष्ठान एवं हनुमत उपासना
27. सखाओं के कन्हैया
28. श्रीकृष्ण सर्वरूप
29. आध्यात्मिक कहानियाँ
    (दस महाव्रत, नवधा भक्ति भाग-1, नवधा भक्ति भाग-2)
30. श्रीमद्भागवत पदच्छेद, अन्वय-एकादश स्कन्ध (नवम खण्ड)
31. श्रीमद्भागवत पदच्छेद, अन्वय-द्वादश स्कन्ध (दशम खण्ड)

सभी मनोकामना पूर्ण करने वाली हनुमद्धाम शुकतीर्थ
में स्थापित 700 करोड़ राममनामयी गगनचुम्बी विशाल प्रतिमा

पुस्तक परिचय

उन्मादिनी यशोदा

महापुरुषों का, भगवद् चरणानुरागी भक्तों का अनुभव है कि वियोग की तीव्र ज्वाला के प्रचण्ड ताप के बिना पूर्ण प्रीति का परिपाक नहीं होता। वात्सल्य का धनी भाव है-यशोदा मैया का श्रीविग्रह। वसुन्धरा के समान अनन्त है-इसकी गोद और धरा के समान असीम है इसकी क्षमा। उन्मादिनी-पगली मैया मेरी-कन्हाई ने तो पूरे ब्रज को ही उन्मत्त बना दिया। गोप-गोपी, गोप-बालक, बालिकाओं की वेदना व्यक्त करने को शब्द ही कहाँ? ब्रज में तो गाय, बछड़े-बछियाँ, मृग, कपि सब पशु-पक्षी, कीट-पतंग, भृङ्ग नन्द-नन्दन के प्रेम में-इस कन्हाई के विषम वियोग में उन्मादी हो गये।

लेखक का तादात्म्य हो चुका है कि "मैया के स्नेह में अकेले कृष्ण का कोई ठेका है? मैया है मेरी प्रेमपगी पागल मैया। अत: मैं उसे स्मरण करने चला हूँ।" स्वानुभूतिपरक मातृ-हृदय के अद्‌भुत उद्‌गार भाव भीने हृदय का उमड़ता प्रवाह, अश्रुयों की अजस्र धारा को संजोया है सुललित मञ्जु शब्दावली में लेखक ने।

मैया के इस उन्माद का, विरह का, टीस का, हाहाकार करती वेदना का एक कर्णिका भी किसी भी भाग्यशाली के मानस में जग जाये-तब तो जीवन ही धन्य हो जाये-अब चपल कन्हाई के मिलन में विलम्ब कहाँ?

हनुमद्धाम

शुकतीर्थ, जिला-मुजफ्फरनगर-251316 (उ.प्र.) भारत

दूरभाष : 01396-228225